पंचम अध्याय

नागार्जुन के खंडकाव्यों में आधुनिकता बोध

पंचम अध्याय
नागार्जुन के खंडकाव्यों में आधुनिकता बोध

अ 1. आधुनिक बोध - स्वरूप विवेचन

2. आधुनिकता - परिभाषा

3. आधुनिकता बोध - प्रवृत्तिमूलक विश्लेषण

4. आधुनिकता और परंपरा

5. आधुनिकता और समसामयिकता

6. आधुनिकता और इतिहासबोध

7. आधुनिकता और विज्ञान का प्रभाव

8. आधुनिकता और मूल्यदृष्टि

9. आधुनिकता और यथार्थवाद

10. आधुनिकता और कविता

11. साहित्य में आधुनिकता और परंपरा

आ नागार्जुन के खंडकाव्यों में आधुनिकता बोध :

1. नागार्जुन के सामाजिक विचार

   i. युवा-शक्ति का महत्व

   ii. एकता-सहयोग पर विश्वास

   iii. लोकहित की भावना

   iv. व्यसनाधीनता

2. नागार्जुन के आधुनिक राजनीतिक विचार -

   i. मालिक - मजदूर संघर्ष

   ii. स्वदेशाभिमान

   iii. न्यायव्यवस्था

   iv. विश्वशांति; साम्राज्यवादियों का एकाधिकार

3. नागार्जुन के धर्मसंबंधी विचार -

   i. साधुओं का पर्दाफाश

   ii. अंधविश्वासों का खंडन

4. नारीविषयक विचारधारा -

   i. नारी शोषण का विरोध

   ii. अनमेल विवाह संबंधी विचार

   iii. पति-पत्नी संबंध विच्छेद

   iv. नए युग की आकांक्षिणी

5. नागार्जुन के खंडकाव्यों में आधुनिकता बोध के इतर आयाम -

   i. अबलाओं / परित्यक्ताओं के लिए आश्रमावस्था

   ii. लावारिस नवजात शिशुओं को औरस बनाना

   iii. मनुष्य जीवन में काम की अनिवार्यता

   iv. जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण

6. कुल निष्कर्ष

❖ ❖ ❖

पंचम अध्याय
नागार्जुन के खंडकाव्यों में आधुनिकता बोध

अ. आधुनिकता बोध - स्वरूप विवेचन

सामान्यतः लोग आधुनिक का अर्थ 'नूतन' या 'नवीन' से लेते हैं। इस संदर्भ में यह कहना उचित होगा कि आधुनिकता एक बौद्‌धिक प्रक्रिया होने के साथ-साथ एक अन्वेषण भी है। इसे हम यह भी कह सकते हैं कि आधुनिक शब्द शोधपूर्ण बौद्‌धिक प्रक्रिया है तथा दूसरे शब्दों में आधुनिकता विभिन्न प्रभावों से उत्पन्न एक चेतना है जिसको निरंतरता के अंतर्गत रखा जा सकता है।

आज हम जिस क्षण का अनुभव कर रहे हैं उसका बीज अतीत के क्षण में छिपा रहता है। प्रत्येक युग का समाज अपने समय की आधुनिक स्थिति और प्रवृत्ति से जुड़ा हुआ रहता है। अतः प्रत्येक युग अपने युग में आधुनिक रहा है क्योंकि हर युग में नई समस्याएँ निर्माण होती हैं और उसके समाधान के लिए रास्तों का अन्वेषण होता रहा है।

आधुनिकता प्रचलित मूल्यों और मर्यादाओं को नई दृष्टि प्रदान करती है। वह रूढ़ि एवं परंपराओं को त्यागकर नई स्थापनाएँ प्रतिष्ठित करती है। वह बौद्‌धिक जागरूकता के आधार पर रूढ़ियों के समक्ष विद्रोह के रूप में उपस्थित होती है। इसलिए आधुनिकता बाह्य आरोपित वस्तु न होकर देश-काल की अनुभूत देन है। गिरिजाकुमार माथुर लिखते हैं कि, "आधुनिकता का अर्थ मात्र सामयिक अथवा बाह्याकार की नर्वानता नहीं है। आधुनिकता अधिक आन्तरिक अथवा मूल्यगत भाव है। उसका एक पक्ष दीर्घकालीन सांस्कृतिक विकास से संबंधित है, जिसमें मानवीय गरिमा तथा पावनता की स्वीकृति, स्वातंत्र्य, न्याय, अभय, अन्यायों के प्रति विद्रोह और अस्वीकृत यंत्र-यथार्थ की सत्ता तथा असंगतियों की मर्म प्रतीति, अनागत की जिज्ञासा, व्यक्ति की विशिष्ट भावनाओं तथा प्रतिक्रियाओं का आदर, मानसिक मुक्ति आदि सम्मिलित हैं। आधुनिकता मात्र समसमायिकता नहीं है - भव्य नण्यता तथा आधुनिकता भी पर्यायवाची नहीं है।"[1]

आधुनिकता का स्वरूप शाश्वत रूप से परिवर्तनशील है। आधुनिकता का स्वरूप जो कल था वही आज भी है मगर वह कल भी होगा, यह दावा नहीं किया जा सकता।

प्रत्येक युग का अपना एक विशिष्ट बोध होता है। युग की महत्ता उसके विकसित या परिवर्तित होने में हैं। इसलिए हिंदी साहित्य के इतिहास को देखा जाए तो यह दृष्टिगत होता है कि आदिकाल का बोध भक्तिकाल में अलग है और भक्तिकाल का रीतिकाल से अलग। रीतिकाल से आधुनिक काल सर्वथा भिन्न है। इसका कारण यह है कि प्रत्येक युग की अपनी परिस्थितियाँ होती हैं। विशेषताएँ एवं विवशताएँ होती हैं। ऐसा होने पर भी यह निःशंक कहा जा सकता है कि आधुनिक बोध एक ऐसा वृक्ष है जिसकी गहन जड़े परंपरा से रस ग्रहण करती हुई वर्तमान को सुसंस्कृत करती है और भविष्य को स्वस्थ दान देने की क्षमता रखती है।

हर युग अपने में आधुनिक होता है। इस हिसाब से आधुनिक कबीर भी थे, आधुनिक भारतेंदु भी थे और आधुनिक आज के साहित्यकार भी है। ये सभी अपने-अपने काल में आधुनिक ही थे।

बौद्धकाल आज प्राचीन हो गया परंतु निश्चित रूप से अपने युग में वह आधुनिक रहा होगा। कबीर, तुलसी, सूरदास आज पुराने कहे जाएँगे परंतु अपने समय में वे आधुनिक ही थे। तुलसी की अपेक्षा कबीर अधिक आधुनिक थे। इसी प्रकार प्रेमचंद और मुक्तिबोध की तुलना में मुक्तिबोध अधिक आधुनिक थे।

आधुनिकता अपने समय की देन होती है। अतीत का अन्वेषण उसका अपना गुण है। आधुनिक मनुष्य प्राचीन परंपराओं को तोडकर उसे नवीन रूप देता है। वह अपने समय से संघर्ष करता है और सार्थक रचना निर्माण करता है। इस तरह आधुनिक होने के लिए प्रगतिशील चेतना आवश्यक है। आधुनिक मनुष्य समय की गति के साथ कदम से कदम मिलाता हुआ अपने युग के पूर्ववर्ती मूल्यों से टकराता ही है। आदिकालीन मनुष्य से परमाणु बम बनाने की तकनीक विकसित करने की अपेक्षा नहीं की जा सकती क्योंकि वह युग पिछड़ा हुआ साधारण मानवी स्थितियों का युग था। इसी प्रकार आज का मनुष्य आदिकालीन परिस्थितियों में असमर्थ है, जिनसे वह युगों पूर्व विदा ले चुका है।

आधुनिकता और मानवी मूल्यों का संबंध घनिष्ठ ही नहीं बल्कि वे एक दूसरे के पूरक हैं, क्योंकि आधुनिकता हर समय अपने साथ ऐसे विचार लेती है जिससे मानव जीवन को पुरातन रूढ़ियों, अंधविश्वासों से मुक्ति मिलती है। उससे व्यक्तिस्वातंत्र्य और समाज निर्माण के नए धरातल प्राप्त होते हैं और यही इसका मूल्यपक्ष माना जाता है। इस मूल्यपक्ष से अलग होकर कोई भी व्यक्ति तथा समाज आधुनिक नहीं हो सकता। भले ही वह कितना ही आधुनिक परिवेश में हो या आधुनिक ढंग से हो।

आधुनिकीकरण वह प्रवृत्ति/प्रक्रिया है, जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति नवीनता की खोज में व्यग्र-सा (बीझी) रहता है। वर्तमान युगीन इस प्रवृत्ति के कारण हम किसी व्यवहार की उपयोगिता अथवा अनुपयोगिता को देखे बिना ही व्यवहार के नए ढंगों को प्रोत्साहन देने लगते हैं। वेषभूषा, खान-पान, रहन-सहन, इतना ही नहीं तो विचारों तक को प्रभावित करने में आधुनिकीकरण ने महत्वपूर्ण कार्य किया है। व्यक्ति जीवन के हर पहलू में आधुनिक बनने का प्रयत्न कर रहा है।

आधुनिकीकरण का सामान्यतः अर्थ 'नवीनीकरण' लिया जाता है। परिवार तथा समाज में रहन-सहन में, सामाजिक तथा राजनैतिक संदर्भों में बहुत ही तेजी से नवीनीकरण हो रहा है। हमारे देश में आधुनिकीकरण कुछ पूँजिपतियों, नौकरशाहों तथा अभिजात वर्गों का है, जो एक फैशन के रूप में है। इसके अनेक कारण हैं। एक तो यह कि हमारा देश अन्य देशों की तुलना में तकनीकी शिक्षा, विज्ञान की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। दूसरा, हमारी भारतीय संस्कृति में परंपरा की जड़ें व्यापक रूप से फैली हुई हैं। तीसरा महत्वपूर्ण कारण भारतीय लोग अधिक संख्या में देहातों में रहते हैं, जिससे विज्ञान-तंत्रज्ञान की उपलब्धियों से उनके जीवन का अधिक संबंध नहीं है।

मनुष्य अतीत की अपेक्षा वर्तमान में जीना चाहता है क्योंकि वर्तमान क्षण ही उसके दायरे में होता है। वर्तमान क्षणों में ज्ञान-चिंतन को बढ़ाकर मनुष्य नित्य नवनवीन खोज करता रहता है। फलतः प्राचीन मूल्यों तथा पारिवारिक और सामाजिक संबंधों का रूप बदलकर नए मूल्यों, नए संबंधों तथा नए विचारों की स्थापना होती है। आधुनिकता के अंतर्गत आधुनिक दृष्टि तर्क, परीक्षण और विवेक के रूप में कार्यरत होती है। इस संबंध में शर्माजी का मानना है, "हमारा अतीत और वर्तमान अत्यंत

विस्तृत, समृद्ध व शक्तिशाली हो सकता है लेकिन आधुनिक चेतना को यदि वह कोई मूल्य दृष्टि, कोई आधार नहीं दे सकता तो अर्थहीन है। तर्क, परीक्षण-विश्लेषण व विवेक आधुनिकता के संदर्भ में, वे कुशल गोताखोर हैं जो उपलब्ध 'सब कुछ' के गहन समुद्र में से उसी अंश को स्वीकार करते हैं जो मानवीय परिस्थितियों को स्वस्थता व सुदृढ़ता प्रदान कर सके।"[2]

आधुनिकता - परिभाषा -

आधुनिकता के बारे में धनंजय वर्मा लिखते हैं, "आधुनिकता मानव विकास यात्रा की जटिल, संश्लिष्ट और गतिशील प्रक्रिया है। वह केवल स्थिति या धारणा नहीं है, निरंतर नए होते चलने की वृत्ति और वर्तमान का बोध भी है। वह मानवीय सभ्यता और संस्कृति की ऐतिहासिक उपलब्धियों से संपृक्त तो है ही, लेकिन उसकी सीमाओं में कैद नहीं है, न ही मोहताज है।"[3]

डॉ. एन. डी. पाटील का मानना है, "आधुनिकता मानसिक प्रत्ययों तथा सामाजिक रहस्यों को समझने तथा विश्लेषित करती हैं ताकि विशेष देशकाल के संदर्भ में मनुष्य सचेत एवं परंपरामुक्त होकर परिवर्तन भी कर सके। वास्तव में आधुनिकता में सिद्धांत एवं व्यवहार का संयोग है।"[4]

डॉ. नरेंद्र मोहन के शब्दों में, "आधुनिकता कोई निरपेक्ष धारणा या निरंकुश सिद्धांत नहीं है। यह गतिशील आधुनिक स्थिति है, जिसका स्वभाव ठहरना नहीं निरंतर बदलना है। ... इसमें मानव स्थितियों का यथार्थ है तो संघर्ष और विद्रोह का संकल्प भी है, आत्मनिष्ठता है तो सामाजिक यथार्थ भी।"[5]

स्पेंग्लर के अनुसार - "जो घटनाएँ चारों ओर घटित होती हैं, उनका प्रतिबिम्बन या प्रतिफलन समकालीनता है परंतु उनका विरोध करना आधुनिकता है।"[6]

विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई इन परिभाषाओं से कहा जा सकता है कि आधुनिकता की कोई भी परिभाषा एकांगी तथा अधूरी रह जाने के लिए मजबूर है। आधुनिकता की संकल्पना निश्चित वैज्ञानिक परिभाषा में नहीं बांधी जा सकती। जब भी इसे वैज्ञानिक शब्दावली में बांधने का प्रयास किया जाता है, त्रुटिपूर्ण रह ही जाती है।

आधुनिकता बोध - प्रवृत्तिमूलक विश्लेषण -

आधुनिकता एक सीमा तक स्वयं मूल्य बनकर जड़वादी प्रतिमानों का निर्मूलन करती है। यह परिवर्तन एक सहज प्रक्रिया होता है। इसी परिवर्तन के भाव-बोध को आधुनिकता बोध कहते हैं।

डॉ. रमेश कुंतल मेघ के शब्दों में - "समाज को परिवर्तित करनेवाले आधुनिकीकरण से तथा समाज संस्कृति की आधुनिकता के संघात से 'आधुनिकता बोध' का आविर्भाव होता है।"[7]

डॉ. रामदरश मिश्र के अनुसार - "आधुनिक बोध का अर्थ है जीवन की नवीन चेतना का बोध?"[8]

वस्तुतः आधुनिकता बोध एक ऐसा मापक यंत्र है, जो हमारे द्वारा किए गए आधुनिक चिंतन एवं संवेदना के आत्मसात करने को मापता है अर्थात आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को क्रियाशीलता प्रदान करनेवाली शक्ति आधुनिकता बोध है।

बोध के स्तर पर आधुनिकता, आधुनिकता बोध है। दूसरे शब्दों में युगीन विसंगतियों का ज्ञान और उनको दूर करने का दायत्वबोध ही आधुनिकता बोध है। यह एक ऐसी विचार-प्रविधि है जो पुरातन-जड़ता से मुक्त कर नवीन जोड़ती है।

डॉ. इंद्रनाथ मदान आधुनिकता बोध के लिए चार प्रमुख बातें मानते हैं 1. आधुनिकता एक प्रक्रिया है, गतिशीलता है, स्थिति नहीं। 2. आधुनिकता के दौरों की निरंतरता 3. आधुनिकता का बोध नगर बोध से जुड़ा है 4. आधुनिकता की प्रक्रिया में प्रश्नचिह्न की निरंतरता है, जो अंदाज और मिजाज दोनों को बदलती है और बदल रही है।"[9]

डॉ. रणजीत के अनुसार - 1. वैज्ञानिक दृष्टि 2. यथार्थवादी दृष्टि 3. युग संपृक्ति 4. व्यक्तित्व सम्मान करने वाली सामयिकता आधुनिकता बोध का मूलाधार है।[10]

इस दृष्टि से सामान्यतः आधुनिक बोध से तात्पर्य किसी काल विशेष की परिस्थितियों का सम्यक ज्ञान प्राप्त कर सामाजिक परिवेश में परंपरागत मूल्यों से नूतन मानदंडों की स्थापना करने का दायित्व बोध भी आधुनिक बोध है।

आधुनिकता और परंपरा -

परंपरा और आधुनिकता एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। वृक्ष पर परिपक्व लगने वाला फल पुष्प से अपना अतीत का संबंध विच्छिन्न नहीं कर सकता। उसी प्रकार फूल कली से और कली शाखा से, शाखा वृक्ष के तने से और तना जडों से संबंध नहीं तोड सकता। वर्तमान का विशाल वृक्ष अतीत की जडों पर जीवित है। जड़ के बिना वृक्ष का अस्तित्व संभव नहीं है। अतः वर्तमान को अपनी परंपरा से विच्छेद करना संभव नहीं है।

जब हम परंपरा से विच्छिन्न होकर किसी सत्य की खोज करते हैं तो एक-दो प्रयास सार्थक हो भी सकते हैं लेकिन प्रत्येक नहीं। परंपरा का पूर्वदीप्त - प्रकाश अनिवार्यतः किसी भी प्रयोग की आधारभूमि पर विकीर्ण हुआ, होना चाहिए। आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में परंपरा का वह स्थान है जो रंगमंच पर प्रकाश व्यवस्था का होता है। रंगमंच पर किसी भी पात्र की उपस्थिति का आभास उचित प्रकाश में ही संभव है। इतना ही नहीं, किसी विशिष्ट कोण से फेंका गया प्रकाश संपूर्ण परिस्थिति में जीवंतता भर देता है। जबकि प्रकाश स्रोत स्वयं अप्रत्यक्ष होता है। इसी प्रकार परंपरा का आलंबन का आधुनिकता के किसी भी कोण के उद्दीपन में निर्विवाद महत्व है।

परंपरा अप्रत्यक्ष रूप में हमारे सामने उपस्थित होती है, वर्तमान में हो रहे प्रयोगों को प्रेरित एवं संचालित करने का कार्य वह पृष्ठभूमि से ही करती है। इस क्रम में जो आज प्रयोग के रूप में है, वे कल परंपरा होंगे और पुनः नवीन प्रयोगों को प्रेरित करेंगे। परंपरा की इस गतिशीलता के बारे में अत्रेय ने कहा है - 'जो लोग प्रयोग की निंदा करने के लिए परंपरा की दुहाई देते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि परंपरा, कम से कम, कवि के लिए कोई ऐसी पोटली बाँधकर रखी हुई चीज नहीं है जिसे वह उठाकर सिर पर लाद कर चल निकले। परंपरा का कवि के लिए कोई अर्थ नहीं है, जब तक वह उसे ठोक-बजाकर, तोड़-मरोड़कर आत्मसात नहीं कर लेती, तब तक वह इतना गहन संस्कार नहीं बन जाती कि उसका चेष्टापूर्वक ध्यान रखकर निर्वाह करना अनावश्यक हो जाए।"[11]

वर्तमान पीढ़ी आनेवाली पीढ़ी को हूबहू वही नहीं देगी, जो अपने बिती पीढ़ी से ग्रहण कर चुकी है। जीवन में कुछ न कुछ बटता रहता है, जिससे पुराने विचार नए संदर्भ में बदलते रहते हैं। आधुनिकता परंपरा के प्रतीयमान अर्थों को स्पर्श करती हैं और परिमार्जित कर उसमें नूतन अर्थवत्ता निर्माण करती है।

समय के साथ-साथ व्यक्ति का विचार परंपरा बन जाती है और परंपरा परिवर्तित होकर आधुनिकता बन जाती है। जब नए मूल्य पुराने मूल्यों से टकराते हैं तो तीसरे मूल्य का जन्म होता है, जिसका नाम आधुनिकता है।

निश्चित रूप से परंपरा हमारी अतीत काल से लेकर अब तक की अर्जित उपलब्धियों का सार है। काल के जिस अंश को हम अतीत या इतिहास कहते हैं, अपने जीवित रूप में परंपरा है और मृत रूप में रूढ़ि। आ. हजारीप्रसाद द्विवेदी का मानना है - परंपरा का शाब्दिक अर्थ ही, "एक का दूसरे को, दूसरे का तीसरे को दिया जानेवाला क्रम है। वह अतीत का समानार्थक नहीं है। परंपरा जीवंत प्रक्रिया है जो अपने परिवेश की संग्रह-त्याग की आवश्यकताओं के अनुरूप निरंतर क्रियाशील रहती है। कभी-कभी इसे गलत ढंग से अतीत के सभी आचारों-विचारों का बोधक मान लिया जाता है।" [12] परंपरा अतीत के विस्तार में से चुनाव है। चयन किया हुआ अंश ही परंपरा के रूप में हस्तांतरित होता है और इस हस्तांतरित अंश से ही आधुनिकता अपना मार्ग बनाती है। समकालिक, परंपरा के उस अंश में भी काट-छाँट कर उसे जीवनोपयोगी बनाता है।

परंपरा और आधुनिकता दोनों गतिशील है। उनमें अंतर यह है कि परंपरा की तुलना में आधुनिकता की गतिशीलता में ठहराव का अभाव है। आधुनिकता में यथार्थ की माँग रहती है, जिसमें शाश्वत निरंतरता विद्यमान रहती है। इस तरह आधुनिकता को परंपरा की नई कड़ी कहा जा सकता है।

आधुनिकता और समसामयिकता -

समसामयिकता वह कालांश है जो चल रहा है। वर्तमान को जीने का माध्यम है समसामयिकता। समसामयिकता के महत्व को स्वीकार न करना मतलब अपने वर्तमान को निष्कासित करना है। आधुनिकता की कोई प्रवृत्ति तभी सही अर्थों में आधुनिक होगी जबकि उसमें समसामयिक क्षणों से साक्षात्कार भी निहित होगा।

कुछ लोग समसामयिकता के संदर्भ में आधुनिकता को ले लेते हैं। आधुनिकता सम-सामयिकता से नितांत अलग अर्थ रखती है। आधुनिक एक ऐसा शब्द है, जिसका संबंध पूर्वकालीन आलोचनात्मक निर्णय से भी होता है। आधुनिकता प्रचलित शैली और शिल्प के प्रति एक क्रांति और अन्वेषण होती है।

समसामयिक लेखक जीवन की घटनाओं पर अपना प्रभाव डालते हैं। तत्कालीन सामाजिक कुव्यवस्था को देखकर प्रतिक्रिया व्यक्त करना और समस्या को अपने साहित्य में चित्रित करना ही रचनात्मक संघर्ष है। आधुनिकतावादी लेखक अपने चारों ओर विश्व का स्वयं ही एक अंग होता है। आधुनिकतावादी लेखक अतीत से जुड़कर वर्तमान में रहकर भविष्य से जुड़ा रहता है। समसामयिक लेखक केवल वर्तमान में जीता है।

आधुनिकता चाहे प्रत्येक समसामयिक तत्व को स्वीकार न करे लेकिन फिर भी जब किसी नवीनता का आविर्भाव हमारे बीच होता है, तो उसमें परंपरा और अतीत के तत्वों का न होना तो सामान्य है लेकिन समसामयिक आयाम की उपेक्षा उसमें कदापि नहीं की जा सकती। इस संदर्भ में शर्माजी का मानना है कि, "आधुनिकता यदि समसामयिकता को पूरी तरह छोड़ दे या निष्कासित कर दे तो वह स्वयं को विकलांग बना देगी। उसका खड़ा पैर ही शेष रह जाएगा। चलता पैर अपनी गति खो देगा।"[13]

समसामयिकता अतीत और भविष्य को जोडनेवाली कड़ी भी है। जीवन के छोटे-छोटे किंतु महत्वपूर्ण वास्तविकताओं को हम समसामयिक होकर ही ग्रहण कर सकते हैं। यदि इन्हें हम क्षणजीवी मानकर त्याग देंगे तो अतीत, वर्तमान और भविष्य की निरंतरता को जोड़नेवाली कड़ी को हम खो देंगे। काल के प्रवाह से वर्तमान की अनुपस्थिति में भविष्य तो आधारहीन हो ही जाता है, अतीत के मूल्यांकन की भी कोई आधारभूमि हमारे पास शेष नहीं रह जाती।

कुछ लोग समसामयिकता के संदर्भ में आधुनिकता को ले लेते हैं। समसामयिकता और आधुनिकता काफी दूर तक साथ चलती है लेकिन यहाँ एक बात जान लेनी चाहिए की समसामयिकता ही आधुनिकता नहीं है और आधुनिकता मात्र समसामयिकता नहीं है। आधुनिकता जहाँ तक संपूर्ण चेतना की परिचायक होने के नाते विस्तृतता रखती है, वहीं समसामयिकता अपेक्षाकृत संकुचित अवधारणा है जो वर्तमान तक ही अपने आप को सीमित रखती है। यह एक कालांश है जिसमें आधुनिकता का स्वरूप जाना जा सकता है।

भूत-वर्तमान-भविष्य का जो क्रम रहता है उसमें वर्तमान की उपस्थिति जिस तरह रहती है, उसी प्रकार समसामयिकता की भी। परंतु प्रत्येक वर्तमान के साथ-साथ आधुनिकता भी उपस्थित हो यह अनिवार्य भी नहीं है। कोई भी विचार या दृष्टि समसामयिक होकर भी आधुनिक नहीं हो सकती और आधुनिक होते हुए भी समसामयिकता की मुखापेक्षी नहीं। समसामयिकता को आधुनिकता स्वीकार नहीं करती है ऐसी बात तो नहीं है, लेकिन उसे ग्रहण ही करे यह भी अनिवार्य एवं आवश्यक नहीं है।

आधुनिकता और इतिहासबोध

काल अथवा समय एक अंतहीन, निरंतर प्रवाहमान अखंड अनुभूति है। काल के इस प्रवाह में हम वर्तमान समय को ही सर्वाधिक उपयोगी मानते हैं। भविष्य की ओर इसलिए दृष्टिपात करते हैं कि वर्तमान में कर रहे प्रयत्नों एवं कर्मों का भविष्य में लाभ होगा यह आशा हमें रहती है। इस धारा में हम सर्वाधिक उपेक्षा करते हैं, वह है हमारा अतीत। अतीत में जो कुछ हमने भोगा वह चाहे पीड़ा दायक हो या संतोषजनक, वर्तमान में उसका कोई सुफल प्राप्त करने में हम अक्सर अक्षम रहते हैं। ऐसा इसलिए है कि हम इतिहास, अतीत की शक्ति पहचानने की, वर्मान में उसे प्रयुक्त करने की क्षमता से रहित है।

"इतिहास को विश्लेषित करने की एक विशिष्ट चेतना ने हमारे ज्ञानानुशासन को एक अवधारणा प्रदान की है जिसे इतिहास बोध कहा गया है।"[14] किसी व्यक्ति, समूह तथा समाज का इतिहासबोध इस बात पर निर्भर करता है कि उसका इतिहास के प्रति दृष्टिकोण कैसा है। दूसरे शब्दों में हम यह

कह सकते हैं कि इतिहास के अध्ययन के दौरान हमारा उसके प्रति दृष्टिकोण क्या है और इतिहास के निष्कर्षों को हम किस प्रकार युगानुकूल प्रस्तुत अथवा प्रयुक्त करते हैं - यह हमारा इतिहास बोध निर्धारित करता है।

ऐतिहासिक काल में से आधुनिकता विकसित हुई है। आधुनिकता को इतिहास से अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि इतिहास की अगली कड़ी आधुनिकता है। मनुष्य अपने अतीत को वर्तमान से ढालकर, वर्तमान को भविष्य के अनुकूल बनाकर उसे सामाजिक व्यवस्था का रूप देता है, जिसे आधुनिकता के नाम से अभिहित किया जाता है।

'इतिहास' के संदर्भ में जो आधुनिक चेतना विकसित हुई है, उसमें निश्चय ही सार्थकता है। नव्य चेतना ने इतिहास को आज उसके अर्थवान रूप में पुनः स्थापित कर दिया है। अतीत की यथार्थ उपलब्ध जानकारी वर्तमान के लिए दिशा-निर्देश या सबक दोनों दृष्टियों से ग्रहण की जा सकती है। यहाँ यह प्रश्न उपस्थित होते हैं कि क्या हम उसी जानकारी के अनुसार समस्याओं का समाधान ढूँढे या उसे विस्मृत कर स्वयं अन्वेषित राह पर चले? इसका उत्तर यह हो सकता है कि इतिहास बोध हमें किसी क्षण, स्थिति या घटना का सम्यक ज्ञान देता है। वर्तमान स्थिति में अध्ययन के दौरान उस घटना या स्थिति के परिणाम हमारे सामने आ चुके होते हैं। अर्थात घटना, उसके विविध पहलू और परिणामों के साथ हमारे पास यह सुविधा उपलब्ध होती है कि उन्हें हम युगानुरूप, आवश्यकतानुसार प्रयुक्त कर सकें या त्याग दें। इतिहास का यह उपयोग पूर्णतः हमारे विवेक तथा निर्णयशक्ति पर निर्भर होता है।

अतीत की वस्तु होने के कारण इतिहास को स्थायी, मृत वस्तु नहीं मानना चाहिए बल्कि उसके प्रति दृष्टिकोण की गतिशीलता एवं जीवंतता ही उसमें से कुछ सार निकाल लेने को प्रेरित कर सकती है। ऐतिहासिक तथ्य इतिहास चेतना के महत्वपूर्ण घटक होते हैं, तथा उनसे ही हमें किसी सृजनात्मक प्रयास का आधार प्राप्त होता है।

आधुनिकता और विज्ञान का प्रभाव

वर्तमान युग यांत्रिकता का युग है। वैज्ञानिक उपलब्धियों को मनुष्य अपने जीवन में अनेक दृष्टियों से उपयोग में ला रहा है। विज्ञान मनुष्य के जीवन में द्रुत गति से परिवर्तन कर रहा है। वैज्ञानिक विचारधारा आधुनिकता की धारणा है। वैज्ञानिक उपलब्धियों से मनुष्य के जीवन में आधुनिकीकरण आया है। हमारे बदलते हुए विचार या दृष्टिकोण विज्ञान से प्रभावित है।

सर्वप्रथम 'औद्योगिक क्रांति' के रूप में विज्ञान की प्रगति का परिणाम विश्व के सामने आया। वैज्ञानिक चेतना का विकास इसी क्रांति के पश्चात विस्तृत एवं तीव्र रूप में हुआ। मनुष्य के जीवन में तार्किक एवं विश्लेषणदृष्टि इसी विज्ञान का प्रभाव है। डॉ. सिंह लिखते हैं, "वैज्ञानिक परिदृष्टि के प्रकाश में विश्लेषण की धारणा का महत्वपूर्ण स्थान है और आधुनिकता बोध की संवेदना में इस विश्लेषण की भावना का यथोचित स्थान है। विश्लेषण की पद्धति विज्ञान की तार्किक पद्धति है और साथ ही वह विचार या धारणा के फार्म को स्पष्ट करती है।"[15]

ज्ञान एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें जितना अधिक अन्वेषण होगा, उतनी ही अधिक उसकी परतें खुलती जाएँगी। अब तक मनुष्य धार्मिक आडंबरों, अंधविश्वासों, रूढ़ियों को चुपचाप स्वीकार करता चला

आया था, वहीं उसने आज इन विश्वासों को विश्लेषित करना आरंभ किया। पश्चिमात्य चिंतन नीत्शे ने नारा दिया कि, 'ईश्वर मर चुका है', जिसका तात्पर्य धर्म का आचार अब हमारे जीवन से हिल चुका है और व्यक्ति जीवन को कठोर यथार्थ के स्तर पर जीने को बाध्य हुआ है। विज्ञान ने इस चिंतन को और प्रश्रय दिया। इस प्रकार वैज्ञानिक चेतना का प्रसार मानव जीवन में आंतरिक और बाह्य दोनों स्तरों पर होना आरंभ हुआ। परंतु यह बात भी उतनी ही सत्य है कि विज्ञान के प्रसार के दो प्रकार के परिणाम सामने आए - निर्माणकारी और विध्वंसकारी। विध्वंसक परिणामों ने एक ओर मारक अस्त्र-शस्त्रों से युक्त युद्धों की नींव पड़ी, एकाधिकार की प्रवृत्तियाँ शक्तिशाली हुई। आम जीवन में भी अराजकता का प्रसार हुआ। भारतीय परंपराबद्ध परिवेशों में जहाँ इस वैज्ञानिक चेतना के फलस्वरूप आए आधुनिकीकरण से युगों पूर्व की जीवन व्यवस्था में विज्ञान ने दोहरे मूल्यों की स्थिति खड़ी कर दी। विज्ञान तथा वैज्ञानिक चेतना की कार्यशैली तर्क, प्रयोग, परीक्षण, अन्वेषण, विश्लेषण, संश्लेषण और उपलब्ध निष्कर्षों पर आधारित होती है। जबकि अब तक मानवी कार्यकलाप संवेदनाओं, भावनाओं को प्रश्रय देनेवाले होते थे।

विद्वानों ने विज्ञान का एक तकनीकी पक्ष और दूसरा चिंतनपरक पक्ष माना है। हिंसा अथवा विध्वंसजन्य परिणामों को प्रस्तुत करनेवाले तकनीकी पक्ष से भिन्न वे चिंतन पक्ष को मानते हैं। डॉ. रमेश कुन्तल मेघ के मतानुसार, "प्रेम का मनोभाव है जो विज्ञान के आन्तरिक विकास से संबंधित है। सत्यरूप में "ज्ञान" के जिस प्रेम की देन यह विज्ञान है, यह ज्ञान एक व्यवस्थित और तार्किक ज्ञान है। इसके अंतर्गत हम किसी वस्तु या प्रत्यय के प्रति ज्ञान इसलिए प्राप्त करना चाहते हैं कि उस "वस्तु" के प्रति हमारा अगाध प्रेमभाव है। विज्ञान का यह पक्ष चिन्तनपरक है, जो हमारे ज्ञान को विस्तृत करता है।" [16] इस चिंतनपक्ष से आधुनिकता का सीधा संबंध अधिक है। तकनीकी पक्ष से यह संबंध आधुनिकीकरण के माध्यम से है।

आधुनिकता के संदर्भ में जब हम वैज्ञानिक चेतना की बात करते हैं तो विज्ञान के उपकरणों या तत्वों से प्रभावित होकर हमें कोई भ्रामक निष्कर्ष नहीं निकाल लेना चाहिए। जैसा कि आजकल विज्ञान के विश्वसंकारी परिणामों को देखकर निकाल लिया जाता है। ये परिणाम विज्ञान की देन अवश्य है परंतु आधुनिकता का वैज्ञानिक चिंतन इन्हें उचित अर्थ में ही ग्रहण करने के पक्ष में है, न कि एक-पक्षीय रूप में।

आधुनिकता और मूल्य दृष्टि -

"मूल्य" शब्द अंग्रेजी के "वॅल्यू" (Value) का पर्यायवाची है। सर्वप्रथम इसे अर्थशास्त्र में मूल्य (Cost) के अर्थ में प्रयुक्त किया जाता था। परंतु धीरे-धीरे इसके अर्थ में व्यापकता आ गई और इसका प्रचलन भिन्न अर्थ में होने लगा। व्यक्तिवादी, समाजवादी, भोगवादी, सौंदर्यवादी, साथ हो सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, नैतिक आदि दृष्टिकोणों से मूल्य का प्रयोग होने लगा। अतः इसे किसी सीमा में नहीं रखा जा सकता है।

मानव जीवन में मूलतः दो परस्परविरोधी विचारधाराएँ देखने को मिलती हैं। प्रथम विचारधारा के अनुसार विश्व क्षणभंगुर एवं नखर है, इसी कारण असत्य भी। असत्य के पीछे भागना वस्तुतः व्यर्थ ही है। इसीलिए कल्पनाश्रित सत्यों को त्यागकर परम सत्य की खोज में ही अपना संपूर्ण जीवन

बिताना चाहिए। दूसरी विचरधारा उसके विपरीत है। वह जीवन की सफलता भागवाद में मानती है। भोगवाद की दृष्टि में अज्ञात और परमसत्य की खोज करना व्यर्थ है। इसके अनुसार वास्तविक सत्य तो वर्तमान जीवन है और अधिकाधिक सुखभोग जीवन की सार्थकता है।

भारतीय चिंतन में इन दो परस्परविरोधी विचारधाराओं का अनुपम समन्वय दृष्टिगत होता है। दोनों का समन्वय ही मानव जीवन को पूर्णता प्रदान करता है।

वास्तव में जीवन मूल्यों के प्रति मनुष्य की परिवर्तित नई दृष्टि ही आधुनिकता है, जो इतिहास और परंपरा को कुछ मात्रा में लाँघकर आगे बढती है। मनुष्य वर्तमान में ही जीता है। अतः अपने वर्तमान के प्रति सजगता ही आधुनिकता का केंद्रीय तत्व है।

भारतीय चिंतकों ने जीवन के चार उद्देश्य माने हैं - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को ही स्वीकार कर उन्हें नवीन नाम देने की चेष्टा की है। ये हैं - अर्थ के लिए अर्थ, काम के लिए आनंद, धर्म के लिए धर्माचरण तथा मोक्ष के लिए पूर्णता या आध्यात्मिक स्वतंत्रता। इस प्रकार धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष भारतीय जीवन के ऐसे मूल्य हैं, जो आधुनिक संदर्भों में भी ठीक बैठते हैं।

भिन्न सामाजिक परिस्थितियाँ, विशिष्ट मूल्यों को उत्पन्न करती हैं। प्रत्येक समाज और संस्कृति की अपनी निजी विशेषताएँ होती हैं, जो एक को दूसरे से पृथक करती हैं। ये विशेषताएँ मूल्य-संस्कार को निरंतर नवीन रूप प्रदान करती रहती हैं।

कभी कभी आधुनिकता की सार्थकता नवीन मूल्यों के लिए मानवतावादी बन जाती है, क्योंकि नवीन मूल्यों द्वारा अन्याय के खिलाफ आवाज उठाई जाती है। साथ ही मानव की वर्तमान स्थिति को सुधारने के उपाय भी सुझाए जाते हैं।

इस प्रकार आधुनिकता में जीवनमूल्यदृष्टि निहित होती है।

आधुनिकता और यथार्थवाद

यथार्थ जीवन की वास्तविकताओं का चित्रण करता है। इसलिए इसमें अतीत और भविष्य की अपेक्षा वर्तमान का ही चित्रण अधिक होता है।

मार्क्सवाद यथार्थ की आधुनिक चिंतनसरणी है। कार्ल मार्क्स मानवतावादी चिंतक थे। उनके मन में शोषित, पीड़ित जन के प्रति आस्था थी हिंदी साहित्य में मार्क्सवाद ही प्रगतीवाद नाम से जाना जाता है, जो यथार्थ की भूमि पर खड़ा है। यथार्थ सद्यकालीन परिस्थिति का बोध देता है अतः उसे आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता है।

आधुनिकता मानव जीवन के लिए एक यथार्थ है और यथार्थ प्रतिक्षण नई-नई प्रतिक्रिया से परिवर्तित होता रहता है। यथार्थ की इस गतिशीलता को ही पूर्ण रूप से स्वीकारते हुए आधुनिकता चलती है जिसके परिणामस्वरूप बदलते परिवेश से मानव के नए अनुभवों के प्रति स्वस्थ दृष्टि उपजती है। जो परिवर्तन आज मानव स्वयं चाहता है, वही करता है। क्योंकि परिवर्तन को स्वीकार करना ही आधुनिक भावबोध को स्वीकार करना है।

वर्तमान और भविष्य के मध्यस्थित मनःस्थिति आधुनिकता है, जो यथार्थ की भू-पर स्थित होकर विकास का केंद्र मनुष्य को मानती है। अमानवीय तत्वों से मुक्ति पाकर ही जातिवाद, रूढ़ियाँ आदि प्रवृत्तियों का विरोध होता है। आधुनिकता की सार्थकता के लिए मानवतावादी विचारों की

आवश्यकता है। अन्याय और अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाना ही आधुनिकता के अंतर्गत आता है। अतः आधुनिकता की इमारत खड़ी करने के लिए यथार्थ भूमि की आवश्यकता होती है।

आधुनिकता और कविता -

आधुनिकता सभी जगह व्याप्त है। वह कहाँ-कहाँ है तथा किस-किस रूप में है, उसका अध्ययन बहुत ही चुनौतीपूर्ण है। आधुनिक तुलसीदास भी थे, आधुनिक निराला भी थे और आधुनिक आज के कवि भी हैं। ये तीनों समय अलग-अलग हैं लेकिन ध्यान से देखा जाए तो एक बात नजर आती है - अपने समय को पहचानते हुए, अपने वर्तमान को जीते हुए भविष्य दृष्टा होना। यही बोध जब काव्य के, साहित्य के संदर्भ में देखा जाता है तो उसकी पहुँच को बहुआयामी बनाता है। काव्य के चरित्र, कथा, शिल्प इत्यादि को समवेत रूप में इसे संस्कार रूप में वहन करना होता है, तभी एक सार्थक कृति साकार होती है।

आधुनिकता साहित्य में तटस्थ दृष्टिकोण लेकर चलती नहीं है बल्कि वह अपने यथार्थ परिवेश के साथ अनवरत रूप से परिवर्तित हो रही है। आधुनिक कवि परंपरागत काव्य की आत्मा को परिवर्तित कर नए शिल्प, प्रतीक, रूप से युक्त नई कविता का सृजन करने लगा है। आधुनिक कविता नव्य सभ्यता के विकास से उत्पन्न घुटन, ऊब, झुंझलाहट से युक्त है।

वास्तव में आधुनिकता साहित्य का शाश्वत धर्म है। हर महत्वपूर्ण रचना में एक ही शाश्वत अनुभूति का रंग और रूप अनन्य होता है, समस्त पूर्ववर्ती रचनाओं से भिन्न होता है और यह भिन्नता ही उसमें आधुनिकता का बोध कराती है।

आधुनिक कविता में आधुनिकता का समावेश कब से और कहाँ तक हुआ है, यह ढूँढना अनिवार्य है। आधुनिकता कवि में है या काव्य में यह बात अधिक महत्वपूर्ण नहीं है। हाँ, इतना जरूर है कि आज की कविता स्वयं आधुनिकता का परिचय देती है।

आधुनिक कवि अपनी बात सीधे ढंग से न कहकर संश्लिष्ट प्रतीकों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है जिससे पाठक के मन में विविध प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न होती हैं। इस दृष्टि से आधुनिक काव्य वैचारिकता, संश्लिष्टता, बुद्धिप्रधानता, व्यंग्योक्तिपूर्णता, सांकेतिकता, दुर्बोधता से युक्त है।

हिंदी काव्य में आधुनिकता का आरंभ 'तारसप्तक' से माना जाता है, जिसकी आधारभूत कसौटी प्रयोगशीलता थी। तारसप्तक में अन्वेषण की प्रवृत्ति मिलती है ,जिससे काव्य में नए धरातल का निर्माण हुआ। तारसप्तक के कवि अपने आप को अन्वेषी ही मानते हैं। 'अज्ञेय' ने 'तारसप्तक' की भूमिका में लिखा है, "संग्रहीत कवि ऐसे होंगे जो कविता को प्रयोग का विषय मानते हैं, जो यह दावा नहीं करते कि काव्य का सत्य उन्होंने पा लिया है, केवल अन्वेषी ही अपने को मानते हैं।"[17]

कुछ आलोचक निराला की कविता 'कुकुरमुत्ता' (1941) से आधुनिकता का प्रारंभ मानते हैं। यह मानने के पीछे उसकी वस्तु और शिल्प संबंधी नवीनता है, जिसके बारे में लक्ष्मीकांत वर्मा ने लिखा है, " 'कुकुरमुत्ता' में वे सभी तत्व मिलते हैं जो आधुनिक काव्य की भावव्यंजना को स्वीकार करते हुए उन समस्त सामाजिक आर्थिक और नैतिक मान्यताओं को अंगीकार करते हैं जिनमें वस्तु का नयापन, शिल्प का प्रयोग और सर्वथा नई परंपरा का सूत्रपात मिलता है।"[18] आधुनिक हिंदी कविता के नएपन को लक्ष्मीकांत वर्मा आधुनिक हिंदी कविता पर आधुनिक अंग्रेजी कविता का

प्रभाव मानते हैं। उन्होंने लिखा है, "आधुनिक कविता पर अंग्रेजी साहित्य के 1918 से 1940 तक के साहित्यिक आंदोलन का भी बड़ा प्रभाव दीख पड़ता है। डी. एच. लारेंस, टी. एस. इलियट इत्यादि ने प्रथम महायुद्ध के साथ एडवार्डियन और जार्जियन कवियों ने विक्टोरियन आत्मबोध और आडंबर की परंपरा को तोड़कर उस स्थिति के अनुकूल नवीनता को अपने रूप में ग्रहण किया। यद्यपि ये कला को चिर-नवीन रूप देने के पक्ष में थे, फिर भी ये अपनी नवीनता के अधिक पोषक थे। इनकी कविताओं में, कलाकृतियों में, प्रतिबोधन अधिक है, केवल संवेदना का रूखा रूप नहीं है। हिंदी कविता भी इसके आंशिक रूप से प्रभावित हुई।"[19]

कविता के संदर्भ में आधुनिकतावाद की शुरूआत के विषय में शमशेर बहादुर सिंह ने लिखा है, "मौलिक रूप से 'तारसप्तक' के प्रयोग अन्यत्र कई और कवियों के, इससे काफी पहले के संग्रहों में मिल जाएँगे, प्रथमतः निराला में ही - न केवल 'तारसप्तक' के लगभग सभी प्रयोग बल्कि उससे भी और कहीं अधिक; दूसरे पंतजी में, उनकी अतुकांत और मुक्त छंद की कविताओं में लगातार 'ग्रंथि' से 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' तक।... उसकी 'ज्योत्स्ना' के कुछ गद्य काव्यांश वस्तुतः कविता के ही मूल अंग हैं। फिर नरेंद्र शर्मा ने भी अपनी कतिपय वर्णनात्मक तुकांत मुक्त छंद की कविताओं में अपनी एक विशिष्ट शैली का परिचय दिया है। (मसलन 'वासना की देह में' - पलाश-वन), यद्यपि वह उनकी सामान्य धारा नहीं। उनकी एक कविता 'बटनहोल' भी पाठकों को अपरिचित न होगी।" [20]

इस तरह कविता में आधुनिकता का आरंभ 'तारसप्तक' या उससे पहले निराला और नरेंद्र शर्मा आदि की कविताओं में देखा जा सकता है।

आधुनिक कविता कल्पनाशील न होकर यथार्थ की धरातल पर खड़ी हुई नजर आती है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया ने सामाजिक संबंधों एवं मूल्यों में तीव्र गति से परिवर्तन किया है। परिणामतः वैयक्तिक और सामाजिक मूल्यों में सामंजस्य स्थापित होने के बजाय द्वंद्व की स्थिति पैदा हो गई है।

आधुनिक कवियों में शमशेर बहादुर सिंह की कविता भी अतियथार्थवाद से प्रभावित है। उनकी कविता के बारे में विजय देव नारायण साही ने लिखा है, "उनके लिए अतियथार्थवाद शुद्ध आत्मपरकता है जिस तरह मार्क्सवाद शुद्ध वस्तुपरकता है। रेखाचित्रों के शक्ल में वह 'कुछ कविताएँ' नामक संग्रह में 'घनीभूत पीड़ा', शीर्षक कविता में हाशिये पर मौजूद है और ये चित्र 'चीन' नामक कविता के चीनी अक्षरों की भाँति कविता की पहुँच के बाहर होते हुए भी कविता के अभिन्न अंग हैं।"[21]

आज के कवि का आंतरतम (हृदय) यातना से पीड़ित है। वह मुक्ति का क्षण अपने अंदर ही ढूँढना चाहता है। आधुनिक कवि अपने मन की पीड़ा प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त करता है। कुँवर नारायण की 'चक्रव्यूह' कविता पाठक के मन को निस्संदेह छू लेती है। कुँवर यदि जानते हैं कि कल का या आज का अभिमन्यू जिंदगी के नाम पर हारा हुआ तर्क है, तो यह कहने का साहस भी वे रखते हैं कि छल के लिए उद्यत व्यूहरक्षक वीर कायर है। इसमें मारे जानेवाले जीव की पीड़ा कवि के अंतर्मन को छू लेती है और तभी यह पीड़ा समष्टि की पीड़ा बन जाती है -

"मेरे हाथ में टूटा हुआ पहिया,
पिघलती आग-सी संध्या,
बदन पर एक फूटा कवच,
सारी देह क्षत-विक्षत,
मैं बलिदान इस संघर्ष में
कटु व्यंग्य हूँ उस तर्क पर
जो जिंदगी के नाम पर हारा गया,
आहूत हर युद्धाग्नि में
वह जीव हूँ निष्पाप
जिसको पूज कर मारा गया
वह शीश जिसका रक्त सदियों तक बहा
वह दर्द जिसको बेगुनाहों ने सहा।" [22]

स्वाधीनोत्तर भारतीय राज्यव्यवस्था में जन-मन की पीड़ा को कवि कुँवरनारायण ने यहाँ चित्रित किया है। समाज का यथार्थ रूप प्रस्तुत करते हुए अपने परिवेश के प्रति आधुनिक कवि की सजगता स्पष्ट की है। उनकी यथार्थवादी वैज्ञानिक दृष्टि अतीत के भूलने में है। वर्तमान में वे परिवेशगत संत्रास की अभिव्यक्ति करते हैं और कर्मरत रहने का संदेश देते हैं -

"कर्म रत रहो
स्वप्न मत देखो,
कहीं उन्माद रह जाए न भौरों का
निरर्थक गीत उद्दीपन!" [23]

कवि सुमित्रानंदन पंतजी अपने 'युगवाणी' काव्य संग्रह में कल्पना का स्वर्णिम लोक छोड़कर यथार्थलोक के धरातल पर उतर आए थे, इसमें विशेषतः मार्क्सवादी सिद्धांतों का प्रभाव उनपर पड़ा है किंतु 'ग्राम्या' काव्यसंग्रह में प्रमुख रूप से ग्राम जीवन में प्रचलित मध्ययुगीन रूढ़ियों तथा अंधविश्वासों के प्रति कवि की प्रतिक्रियाएँ व्यक्त हुई हैं -

"राम राम,
हे ग्राम देवता, रूढ़ि धाम!
तुम स्थिर, परिवर्तन रहित, कल्पवत एक याम;
जीवन संघर्षण विरत, प्रगति पथ के विराम
शिक्षक तुम, दस वर्षों से मैं सेवक, प्रणाम!"[24]

यहाँ आधुनिक कविता में स्थित रूढ़ि एवं परंपराओं का विरोध परिलक्षित होता है। वर्तमान कवि मध्ययुगीन परंपराओं से बिल्कुल असंतुष्ट है। वह रूढ़ियों का विरोध करता हुआ दिखाई देता है।

आधुनिक कवि समाज में व्याप्त मन को हिला देनेवाली यथार्थ स्थिति का अंकन अपनी कविता में करता है। समाज में व्याप्त कुरूपता को वह बेझिझक व्यक्त करता है -

"यहाँ धरा का मुख कुरूप है,
कुत्सित गर्हित जन का जीवन,
सुंदरता का मूल्य वहाँ क्या
जहाँ उदर है क्षुब्ध, नग्न तन?
जहाँ दैन्य जर्जर असंख्य जन
पशु-जघन्य क्षण करते यापन,
कीडों से रेंगते मनुज शिशु,
जहाँ अकाल वृद्ध है यौवन!"[25]

यहाँ कल्पनाश्रित सुंदरता की जगह यथार्थवादी कुरूपता को अभिव्यक्ति देना आधुनिक कवि को अधिक उचित लगता है।

आधुनिक कवि अपनी कविता में नारी का मांसल रूप चित्रित न कर ऐसी नारी को चित्रित करता है जो मानवी गुणों के नैसर्गिक सौंदर्य से विद्‌यमान हो। कवि का विश्वास है कि भारतीय संस्कृति से पोषित यह नारी ही मानव को स्वर्ग के समान सुख प्रदान कर सकती है। पंतजी 'स्त्री' कविता में कहते हैं -

"यदि स्वर्ग कहीं है पृथ्वी पर,
तो वह नारी उर के भीतर,
दल पर दल खोल हृदय के स्तर
जब बिठलाती प्रसन्न होकर
वह अमर प्रणय के शतदल पर।" [26]

आधुनिक कविता व्यंग्य और आक्रोशपूर्ण है। उसमें बौद्‌धिकता भी प्रचुर मात्रा में है। इसमें चित्रित मानव जिन तनावों. विसंगतियों एवं कुंठाओं को लिए हुए जी रहा है, वे पूर्णतः यथार्थ हैं।

अकाल, बेरोजगारी, भुखमारी, जातिवाद, धार्मिक संकीर्णता और सांप्रदायिक दंगों ने हमारे आदर्श की पोल खोल दी है। वर्तमान परिस्थितियों से जूझता आदमी सुख की तलाश करता हुआ दिखाई देता है। जो जिंदगी से कम से कम अपेक्षा रखता है, वही आधुनिक युग में सुखी हो सकता है। कवि कुँवर नारायण को 'आशय' कविता का भावार्थ देखिए -

"आमाशय,
यौनाशय,
गर्भाशय...
जिसकी जिंगदी का यही आशय,
यही इतना भोग्य,
कितना सुखी है वह,
भाग्य उसका ईर्ष्या के योग्य!"[27]

वर्तमान जीवन में आधुनिकीकरण के फलस्वरूप बढ़ती अपेक्षाएँ, तनावों, कुंठाओं में जीता आदमी निराशा और अकेलेपन से संत्रस्त है। साथ ही भूख की समस्या से भी ग्रस्त है -

"मैंने देखा है कई साल से
स्तब्ध लडकियों को
जो दफ्तरों से निकलकर
कटे हुए पौधों की तरह फैल जाती हैं
सडकों पर कहीं न देखती हुई
मैंने मकानों के पिछवाडे से उठती हुई
भूख देखी है।" [28]

यहाँ कवि मंगलेश डबराल ने वर्तमान जीवन की ज्वलंत समस्या 'भूख की समस्या' को अपने कविता के माध्यम से व्यक्त किया है, जो आधुनिक कविता की विशेषता है।

आधुनिकतावादी कविता कल्पनाश्रित परंपरागत कविता से भिन्न है। आधुनिक कविता में मानसिक संघर्षों और द्‌वंद्‌वों से पीड़ित वर्तमान मनुष्य की स्थिति का चित्रण हुआ है, क्योंकि आधुनिक मनुष्य अस्तित्व की भयावह यथार्थ स्थिति से गुजर रहा है, जिसको आधुनिक कवियों ने अपने काव्य में अभिव्यक्ति दी है।

साहित्य में आधुनिकता और परंपरा

कोई भी साहित्यकार अपने युग से प्रभावित होता है और जो कुछ देखता है, अनुभव करता है उसका चित्रण कलात्मक ढंग से अपने साहित्य में करता है। साहित्यकार मानव जीवन मूल्यों के समय-समय पर होनेवाले परिवर्तनों की ओर सदैव सजग और सतर्क रहता है और उन जीवनमूल्यों को अपने साहित्य में चित्रित करता है। परंपरा और आधुनिकता का वास्तविक संबंध पिता-पुत्र जैसा होने के कारण साहित्य में न केवल परंपरा का चित्र दिखाई देता है और न केवल आधुनिकता का। हाँ, यह बात जरूर है कि आज साहित्यकार अपने साहित्य में परंपरा की नींव पर आधुनिकता का भव्य भवन खड़ा कर देता है और सजग एवं संवेदनशील पाठकों को अपनी ओर आकृष्ट करता है। आज का साहित्यकार परंपरा का उत्तम अंश ग्रहण कर साहित्य में आधुनिकता को अभिव्यक्त करता है।

अगर हम आधुनिक हिंदी साहित्य की ओर ध्यान देते हैं तो हमें मालूम होता है कि आधुनिक साहित्यकारों ने 'वाल्मीकि' कृत 'रामायण' या 'व्यास' के 'महाभारत' के कुछ पारंपारिक अंशों को चुनकर उन्हें आधुनिक साहित्य में वर्तमान जीवन संदर्भ में प्रस्तुत किया है, जो उन साहित्यकारों की उनके साहित्य में व्यक्त 'आधुनिकता' ही है।

नरेश मेहता के 'संशय की एक रात' में वाल्मीकि प्रणीत राम का चरित्र-चित्रण आधुनिक प्रजा-पुरुष के रूप में किया है, जो सीता की मुक्ति, युद्‌धजन्य विध्वंस, अनागत युद्‌धों की नींव आदि प्रश्नों पर विभाजित व्यक्तित्व एवं संशयाकुल मन से चिंतामग्न हैं। विभिन्न समस्याओं से जूझता हुआ राम का मन स्वयं को सामूहिक निर्णय को सौंपने के बाद भी पूर्ण आश्वस्त नहीं है। यही आधुनिक युग की विसंगति है -

"यदि मैं मात्र कर्म हूँ,
तो यह कर्म का संशय है।

... LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

यदि मैं मात्र क्षण हूँ,
तो यह क्षण का संशय है।
यदि मैं मात्र घटना हूँ,
तो यह घटना का संशय है।" [29]

आज साहित्यकार वर्तमान में जीता है लेकिन कभी-कभी उसका ध्यान अतीत की ओर दौड़ता है और वह इतिहास बोध को ध्यान में रखकर 'परंपरा' का आधार लेकर आधुनिकता को अंकित करता है। प्राचीन भारतीय साहित्य में चित्रित राम, कृष्ण, बुद्ध आदि वास्तव में आज मिथक बन गए है। हिंदी साहित्यकारों ने उन मिथकों को आधुनिकता में साकार किया है।

आधुनिक साहित्यकार कार्ल-मार्क्स की चिंतनप्रणाली से प्रभावित है। वह लोकजीवन से प्रभावित होकर उसकी नई व्याख्या करने में अग्रसर है। हिंदी के आधुनिक साहित्यकारों प्रेमचंद, यशपाल, मुक्तिबोध, नागार्जुन, निराला, पंत आदि ने जिस प्रगतिशील चिंतन और लोकजीवन को अभिव्यक्त किया है वह वास्तव में आधुनिकता ही है।

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कवियों में 'नागार्जुन' के 'भूमिजा', 'भस्मांकुर', नरेश मेहता के 'संशय की एक रात', 'कुँवरनारायण' कृत 'आत्मजयी', नरेश शर्मा कृत 'द्रौपदी', जगदीश गुप्त के 'गोपा-गौतम' आदि काव्यों में मिथक की नूतन उद्भावनाओं का अंकन हुआ है।

आज का साहित्यकार सजग शिल्पी है। अतः शिल्प में भी नए-नए प्रयोग करने की उसकी दृष्टि आधुनिक ही है। कथावस्तु, पात्र, चरित्र-चित्रण, भाषा, शिल्प, संवादयोजना, आदि में आधुनिक साहित्यकारों ने नव-नवीन प्रयोग किए हैं। यह नव्य प्रयोग ही आधुनिकता की पहचान है।

इस प्रकार आधुनिक हिंदी साहित्य में आज एक साथ परंपरा और आधुनिकता का सुरेख समन्वय हमें देखने को मिलता है। हिंदी साहित्य में परंपरा और आधुनिकता दोनों अप्रत्यक्ष-प्रत्यक्ष रूप में दिखाई देती है।

नागार्जुन के खंडकाव्यों में आधुनिक बोध

प्रस्तावना -

रचनाकार वास्तविक अर्थों में भाव, कर्म एवं बोध के त्रिकोणात्मक पक्ष को एकरूप करता हुआ चेतना की व्यापकता को अग्रसारिक करता है। सर्वप्रथम वह अपने बोध को रचनात्मकता के धरातल पर जन संवेदना सापेक्ष करता है। उसका यही सामाजिक बोध सृजन के धरातल पर उसके चिंतन को गहरी दिशा प्रदान करता है। वह सामाजिक विसंगतियों, विकृतियों तथा सामाजिक विघटन के प्रति सचेत होकर अपने प्रतिक्रियामूलक विचार अभिव्यंजित करता है।

साहित्यकार निजी जीवन में उपेक्षित रहकर जीवनपर्यंत आत्मसंघर्ष करता हुआ सामाजिक दायित्वों के प्रति सचेत रहता है। वैयक्तिक स्वार्थों को तिलांजलि देकर सर्वहारा वर्ग की मानसिकता को आत्मसात किए दोषपूर्ण व्यवस्था से जूझता हुआ अपनी सृजनधर्मिता में युगसापेक्ष भाव बोध से चेतन का विकास एवं प्रसार करता है। जब वह मूल्यहीन संस्कारों से मुक्ति पा लेता है तब उसकी रचना युगीन चेतना से प्रौढ-परिपक्व होती है।

आधुनिक रचनाकार की साहित्यिक प्रतिबद्धता अशिक्षित, उपेक्षित सर्वहारा वर्ग से होती है। वह उन लोगों की वास्तविकताओं को काव्य के माध्यम से संवेदनात्मक वाणी देता है और उनकी दयनीय स्थिति के उत्तरदायी तत्वों को व्यंग्य बाण का शिकार भी करता है।

आधुनिक काव्य पर मार्क्सवाद का कहीं न कहीं अवश्य प्रभाव दिखाई देता है। वस्तुतः मार्क्सवादी दर्शन व्यक्तिवाद का घोर खंडन करता है। इसलिए उसका संबंध चेतना के धरातल पर सामूहिक रूप से है। परंतु यह बात भी सही है, व्यक्ति समाज का अटूट अंग है। वह समाज से जुडा हुआ प्राणी है।

जिस साहित्यकार के साहित्य में युगबोध की क्षमता होती है, उसके साहित्य में समकालीन समाज का सर्वांगीण चित्रण अवश्य होता है। क्योंकि कवि समाज का एक हिस्सा होता है और साहित्य और समाज का अन्योन्याश्रित संबंध है। साहित्यकार सामान्यतः जिस परिवेश से संबंधित होता है, उस परिवेश के संस्कारों, रूढ़ियों, विचारों का प्रभाव उसपर प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में अवश्य पडता है। नागार्जुन के काव्य में समकालीन परिस्थितिजन्य विसंगतियों, विडंबनाओं को अभिव्यक्ति मिली है। उनके काव्य का नायक जनसामान्य (आम आदमी) रहा है। उनके काव्य में (खंडकाव्यों) में अभिव्यक्त आधुनिक बोध (युगबोध) को इस प्रकार देखा जा सकता है-

नागार्जुन के आधुनिक सामाजिक विचार -

नागार्जुन आधुनिक युग की नव-चोतना के कवि थे। उन्होंने एक ओर वर्ग-संघर्ष से संत्रस्त मानवों के प्रति गहन संवेदना व्यक्त करते हुए इसके लिए उत्तरदायी व्यवस्था के विरुद्ध तीव्र आक्रोश प्रकट किया है और दूसरी ओर स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात बहुसंख्य जनता को अभावों, कष्टों एवं पीड़ाओं में देखकर स्वेदशी शासकों की अनुचित कार्यपद्धति पर करारा व्यंग्य किया है।

नागार्जुन के काव्य के आस्वाद में विविधता है, काव्य की भाषा में विविधता है, उनके जीवन के अनुभवों में विविधता है। कवि स्वयं सर्वहारा वर्ग में जन्मे और पिता से विरासत में मिली घुमक्कडी प्रवृत्ति के कारण देश-विदेश का भ्रमण करते रहे। अनुभव और रचनात्मक साहित्य में जितना प्रत्यक्ष संबंध नागार्जुन के यहाँ देखने को मिलता है, उतना शायद ही कहीं मिलता हो!

बचपन से अभावों में पले होने के कारण गरीबी की मार उन्होंने खुद सही है। उन्हें जीवन में शाप ही मिले हैं, आशीष किसी ने उन्हें नहीं दी। अतः स्वाभाविकतः ही उनका लक्ष्य एक समाजवादी समाज है। जिसमें -

"अधर-अधर पर
हास अनश्वर
शिर-शिर पर अमिताभ ताज हो!
सतत अभ्युदित
जन-जन प्रमदित
सर्व सुखद सुंदर समाज हो।" [30]

कवि नागार्जुन को पीड़ित जनता के कष्टों ने अधिक प्रभावित किया था। उन्होंने देखा था कि

निम्नवर्ग दिन-रात कष्ट करता हुआ भी दो वक्त की रोटी नहीं जुटा पा रहा है। अभावों में पलते और कठिनाइयों से जूझते इस वर्ग को नागार्जुन ने चित्रित किया है।

"कुली मजदूर हैं
बोझा ढोते हैं, खींचते हैं ठेला
धूल-धुआँ भाप से पड़ता है साबडा
थके-माँदे जहाँ-तहाँ हो जाते हैं ढेर?"[31]

दूसरी ओर कवि ने समाज में धनिक वर्ग देखा है, जो ऐश-आराम में लिप्त है। स्वाधीनता के पश्चात अंग्रेज राज तो खतम हो गया परंतु अपने ही लोग देश की भोली-भोली जनता पर अन्याय करने लगे। पूँजीवादियों ने सर्वहारा वर्ग का शोषण करना प्रारंभ किया। जमींदार एवं साहूकार लोग गरीब जनता का शोषण करते रहे। जब तक इन लोगों का (पूँजीपतियों का) अस्तित्व होगा तब तक भारतमाता के मंदिर में न्याय नहीं मिल सकता।

"जमींदार है साहूकार है, बनिया है, व्यापारी है,
अंदर अंदर विकट कसाई बाहर खद्दरधारी है,
सब घुस आए भरा पड़ा है भारतमाता का मंदिर
एक बार जो फिसले अगुआ फिसल रहे हैं फिर फिर फिर।"[32]

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सत्ता की बागडोर प्रजातंत्र के हाथों में आई। परंतु हमारी व्यवस्था पूँजीपतियों, जमींदारों से कंधा मिलाकर चलने लगी। उच्च वर्ग ने सांमतवादी व्यवस्था से अपना गठबंधन किया। शोषक वर्ग ने देश में वर्ग-वैषम्य तथा आर्थिक संकट को जन्म दिया। परिणामतः देश में वर्ग-संघर्ष निर्माण हुआ।

जनता के जीवन को कष्टमय और कलहपूर्ण बनानेवाली प्रत्येक चीज नागार्जुन की घृणा का पात्र बनती है। उनकी इस घृणा को वे अपनी कविता के माध्यम से इसप्रकार अभिव्यक्त करते हैं -

"बताऊँ?
कैसे लगते हैं
दरिद्र देश के धनिक?
कोढ़ी कुढब तन पर मणिमय आभूषण!"[33]

'बताऊँ' के साथ जो मुद्रा है, उससे नागार्जुन एक तरफ जनसमुदाय से विश्वास का नाता जोड़ लेते हैं। दूसरी तरफ नागार्जुन स्व-अनुभव के बल पर इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि देश की दरिद्रता का उपचार करने की जगह इस कोढ़ पर मणिमय आभूषण का शृंगार करनेवाला समाज अमानवीय है।

नागार्जुन की काव्य-चेतना का यह पक्ष जनजीवन के साथ आत्मीयता से जुड़ा है। इसलिए इस समाज को बदलना चाहते हैं। वे ऐसा समाज-निर्माण करना चाहते थे जहाँ जमींदारों की हुकूमत नहीं चलेगी। किसानों में जमीन समान रूप से बँट जाएगी और समाज में बेकारी का नामोनिशान नहीं रहेगा।

"सेठों और जमींदारों को नहीं मिलेगा एक छदाम
खेत-खान-दूकान मिलें सरकार करेगी दखल तमाम
खेत मजूरों और किसानों में जमीन बँट जाएगी
नहीं किसी कमकर के सिर पर बेकारी मँडराएगी।"[34]

पूँजीपतियों को हमेशा यह चिंता रहती थी कि कहीं निम्न वर्ग संगठित होकर क्रांति न कर दे। इसलिए इन लोगों ने मध्य वर्गीय बुद्धिजीवी को चंद सुविधाएँ देकर उसे अपना पालतू बना दिया। पूँजीपतियों और मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी वर्ग की पारस्पारिक साँठ-गाँठ निम्नवर्ग के लिए घातक सिद्ध हुई। नागार्जुन इस बात को अच्छी तरह जानते थे। इसलिए इन बुद्धिजीवियों को भी उन्होंने अपने व्यंग्य का निशाना बनाया है।

"हे विश्रांत बुद्धिजीवी, तुम बने हुए हो भारी भ्रम भगवान
शासक-शोषक वर्ग तुम्हारा क्यों न करें गुणगान..."[35]

नागार्जुन के काव्य का नायक अत्यंत सामान्य जन है। जैसे-फटी बिवाइयों से रिक्शा हाँकनेवाला मजदूर, श्रमिका कवि की दृष्टि साइकिल रिक्शा चलानेवाले उस मजदूर के घट्ठों वाले कठोर पैरों पर जाती है और उनका संवेदनशील मन में वेदना उत्पन्न होती है -

"देर तक टकराए
उस दिन इन आँखों से वे पैर
भूल नहीं पाऊँगा-फटी बिवाइयाँ
खुब गई दुधिया निगाहों में
धँस गई कुसुम-कोमल मन में।"[36]

साम्यवादी विचारधारा के अनुसार क्रांति सदैव निम्न सर्वहारा वर्ग ही करता है, जिसका संबंध उत्पादन से है। परंतु उसके जीवन की विडंबना यह है कि यह कृषक मजदूर वर्ग जी तोड मेहनत करके खेती करता है परंतु स्वयं रोटी से वंचित रहता है। निम्नवर्ग को क्रांति के लिए मध्यवर्ग के सहयोग की आवश्यकता है, ताकि शोषण से मुक्ति पा सको। परंतु मध्यवर्ग उसको सहयोग नहीं देता। परिणामतः शोषितों की स्थिति और भी दयनीय हो जाती है। साथ ही देश में भूख, अकाल, महामारी की समस्याएँ सर्वहारा वर्ग को निगल रही है। इस यथार्थ स्थिति का चित्र नागार्जुन ने अत्यंत विदारक रूप में खिंचा है -

"मँडराती है यम की नानी खेतों में खलिहानों में
भूख, अकाल महामारी की फसल उगी मैदानों में
लूट-पाट की होड़ मच गई नरभक्षी हैवानों में
लटक रहा ताला गल्ले की सरकारी दूकानों में।" [37]

आजादी के सालों बाद भी किसानों एवं मजदूरों की ऐसी विवशता पूर्ण हालत देख कवि को लगता है कि इनके माध्यम ऐसी विवशता पूर्ण हालात देख कवि को लगता है कि इनके माध्यम से भारतमाता अपना दुःख व्यक्त कर रही है -

"जीभ कटी है भारतमाता मचा न पाती शोर
देखो धँसी-धँसी से आँखें, पिचके-पिचके गाल
कौन कहेगा आजादी के बीते तेरह साल।" [38]

नागार्जुन ने देखा है कि आज समाज में सच बोलना भी एक जुर्म हो गया है। सच बोलने पर हानि उठानी पड़ती है और झूठ बोलनेवाले मेवा-मिसरी चखते हैं। चापलूसों की इस बढ़ती हुई कद्र पर कवि ने व्यंग्य किया है, जिसमें सामाजिक अव्यवस्था प्रकट होती है। कवि की पहले से ही झूठ और आंडबर से घृणा थी। वे इस सामाजिक अव्यवस्था को ही सामाजिक विषमता का कारण मानते हैं। इसका मूल दोषपूर्ण राजनीति ही है -

"सपने में भी सच न बोलना, वरना पकड़े जाओगे
भैया लखनऊ-दिल्ली पहुँचो मेवा-मिसरी पाओगे
माल मिलेगा रेत सको यदि गला मजूर किसानों का
हम मरभुक्खों से क्या होगा चरण गहो श्रीमानों का।"[39]

स्वाधीनता के बाद महँगाई आसमान छू रही है और साधारण जन अधनंगा, भूखा घूम रहा है। परंतु शासक अपने विलासमय जीवन व्यतीत करने में व्यस्त है। कवि ऐसे शासकों से नफरत करता है -

"अधभूखे, अधनंगे डोलें हरिजन गिरिजन बन में
खुद तो चिकनी रेशम डाटे उड़ती फिरो गगन में
महँगाई की सूर्पनखा को कैसे पाल रही हो
शासन का गोबर जनता के मत्थे डाल रही हो।"[40]

राजनीतिक तंत्र और सामाजिक षड्यंत्र दोनों के मध्य यह वर्ग असुरक्षित शोषित जीवन व्यतित कर रहा है। सर्वहारा की क्रांति को शमित करने के लिए व्यवस्था उन्हें निरंतर झूठे आश्वासन देती है। जनता की भूख को आश्वासन की मीठी वाणी से चुप करा दिया जाता है -

"आश्वासन की मीठी वाणी भूखों को भरमाती
पाला पड़ता है लेकिन वह नंगों को गरमाती
जनमन को आडंबर प्रिय है, प्रिय है उसको नाटक
खोल दिए हैं तुमने कैसे इन्द्रसभा के फाटक।" [41]

कवि सामाजिक विषमता के प्रति पूर्णतः जागरुक है और क्रांति के द्वारा साम्यवादी समाज-व्यवस्था की स्थापना का समर्थक है। नागार्जुन के हृदय में भारतीय जन-जीवन के लिए अटूट स्नेह भरा हुआ है। इसलिए इस विद्रोही कवि ने जनजीवन को उन्नत बनाने के लिए जागरण का मंत्र फूँका है। सर्वहारा को यातना और प्रताड़ना से बचाने के लिए क्रांति का आह्वान किया है।

नागार्जुन कर्म को देवता मानते थे। उनका प्रेरणा-स्रोत कर्मरत जगत है। वह अपनी कविता के माध्यम से जनता को कर्मरत रहने का संदेश देते हैं। जनता को वे कोरा उपदेश ही नहीं देते बल्कि खुद भी हमेशा कर्मरत रहते थे। कर्म में उनका गहरा विश्वास था -

"नई-नई सृष्टि रचने को तत्पर
कोटि-कोटि कर-चरण
देते रहे अदृश्य स्निग्ध इंगित
और मैं अलसकर्मा
पड़ा रहूँ चुपचाप
यह कैसे होगा?" [42]

अपनी मातृभूमि के प्रति कवि नागार्जुन को गहरा लगाव था। जनता की पीड़ा को कवि हमेशा अपनी पीड़ा समझता था। और देश पर जब भी आपत्ति आई, वह हमेशा भारतीय जनता के साथ रहे। हमें नागार्जुन के काव्य में भारत की पूरी तस्वीर देखने को मिलती है। यहाँ की संस्कृति, प्रकृति, जन-भावनाएँ, राजनीतिक गतिविधियाँ, नेताओं के कारनामे आदि विविध रूप इनके काव्य में देखने को मिलते हैं, जिससे यह कहा जा सकता है कि भारतीय समाज का चित्रण उन्होंने अपने काव्य में प्रतिबिंबित किया है।

मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी समाज भौतिक युग में मृग के समान भटकता हुआ वैयक्तिक सुख-सुविधाओं हेतु दौड़ रहा है। उसकी वैयक्तिक स्वार्थ लिप्सा कस्तुरी मृग के समान कभी समाप्त न होनेवाली है। यह वर्ग भौत्तिक युग में स्व-हित हेतु अपना ही व्यक्तित्व चमकाने में सलग्न है। हर व्यक्ति समाज के शोषण से केवल अपना घर भरना चाहता है। कवि को यह स्वीकार नहीं है।

"अधिकाधिक योग-क्षेम
अधिकाधिक शुभ-लाभ
अधिकाधिक चेतना
कर लूँ संचित लघुतम परिधि में!
असीम रहे व्यक्तिगत हर्ष-उत्कर्ष!
अकेले ही सकुशल जी लूँ सौ वर्ष!
यह कैसे होगा?" [43]

शायद इसीलिए नागार्जुन व्यक्ति पर सामाजिक नियंत्रण को आवश्यक समझते थे। अगर व्यक्ति पर समाज का नियंत्रण होगा, तभी कोई मनुष्य दूसरे मनुष्य के बारे में सोच सकता है। दूसरों के दुख-दर्द को समझ सकता है। अपनी एक कविता में उन्होंने सामाजिक प्रतिबंधन को इन शब्दों में स्वीकार किया है -

"सलिल को सुधा बनाएँ तटबंध
धरा को मुदित करें नियंत्रित नदियाँ
तो फिर मैं ही रहूँ निर्बंध!
मैं ही रहूँ अनियंत्रित!
यह कैसे होगा?" [44]

नागार्जुन का मानना था कि आजादी के बाद सभी सुखों का हकदार उच्चवर्ग हो गया। पूँजीपति, जमींदार, साहूकार आदि समाज के तथाकथित उच्चवर्ग ने निम्न वर्ग को रोटी से वंचित कर दिया।

जब अनाज गोदामों में कैद हो तो जनता की स्थिति कंकाल जैसी होना स्वाभाविक है। अतः कवि सर्वहारा की आजादी का सुख उपलब्ध कराना चाहता है। उनका मानना था जब सर्वहारा वर्ग की सच्चे अर्थों में स्थिति बदलेगी तभी समाज में वर्ग - वैषम्य की दूरी कम हो जाएगी -

"सुजला सुफला शस्य श्यामला माता के गुण गाएँगे
पानी की खातिर पौधों को कभी नहीं तरसाएँगे
बच्चों जैसी फसलों पर निशि दिन सिनेह बरसाएँगे
नाहक सिर पर कोटि-कोटि का कर्जा नहीं चढाएँगे।" [45]

यही जनवादी दृष्टि नागार्जुन के काव्य का प्रमुख आकर्षण है। जिसमें जनशक्ति को सर्वोपरि मानकर उसमें चेतना का शंख फूँकना कवि का अभिप्रेत है। कवि को आशा थी कि सुखक्रांतिरूपी सूर्य का उदय होते ही जनता की पीड़ाओं का अंधकार अवश्य नष्ट होगा।

युवा-शक्ति का महत्व -

नागार्जुन सामाजिक परिवर्तन के लिए चलनेवाले हर अभियान का स्वागत करते थे। इसके साथ ही इस सामाजिक परिवर्तन में युवकों की भूमिका को अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान देते थे।

अपनी सहज क्रांतिकारी वृत्ति से उन्होंने यह देखा है कि स्वाधीनता संग्राम और प्रगतिशील आंदोलन के अनुभव से निकले हुए तपे-तपाए कुछ लोगों की ही तरह स्वाधीन भारत में पले-बढ़े युवकों का भी बड़ा अंश उन्हीं सांस्कृतिक मूल्यों से ग्रस्त है, जिसका प्रचार यहाँ का शासक वर्ग अपने हित के लिए कर रहा है।

"तुम किशोर तुम तरुण
तुम्हारी राह रोककर
अनजाने यदि खड़े हुए हम
कितना ही गुस्सा आए,
पर मत होना नाराज
वयः संधि के कितने ही क्षण हमने भी तो
इसी तरह फेनिल क्षोभों के बीच गुजारे
कान लगाकर सुनो : कहीं से आती है आवाज
"भले ही विद्रोही हो,
सहनशील होती है लेकिन अगली पीढ़ी"
पर अपने प्रति सहिष्णुता की भीख न हम माँगेंगे तुमसे
मिमांसा का सप्ततिक्त वह झाग
अजी खुशी से हम पी लेंगे
क्रोध-क्षोभ के अवसर चाहे आ भी जाएँ
किंतु द्वेष से दूर रहेंगे" [46]

कवि क्रांति में, जनता के सचेत प्रयत्न में दृढ आस्था रखते थे। वे नई पीढ़ी को संयत और सहनशील होने तथा द्वेष से दूर रहने की सलाह देते हैं। विपत्तियों में भी अविचलित रहकर संघर्ष करने की प्रेरणा देते हैं।

सूर्योदय होते ही पीड़ारूपी अंधकार अवश्य नष्ट होनेवाला है। यह कार्य युग को बदलनेवाले तरुण वर्ग को पूरा करना है। इस तरुण वर्ग का रास्ता भले ही कठिन हो परंतु सफलता निसंदेह है।

"लक्ष्य स्पष्ट है पंथ कठिन है
रात्रि शेष यह आगे दिन है।" [47]

नागार्जुन तरुण वर्ग का ध्यान जनसामान्य के दुःख की ओर आकृष्ट करके उसे मिटाने के लिए आह्वान करते हैं।

"निविड़ अविद्या से मन मूर्च्छित
तन जर्जर है भूख-प्यास से
व्यक्ति-व्यक्ति दुख दैन्य ग्रस्त है
दुविधा में समुदाय पस्त है
लो मशाल अब घर-घर को आलोकित कर दो।" [48]

कवि सिर्फ तरुण वर्ग के प्रति ही नहीं, बल्कि तुतलाते बच्चों के प्रति भी आशावान है। साम्राज्यवादी दैत्यों का संहार इन बच्चों से होगा, ऐसा कवि का विश्वास है।

"निर्भय होकर शोषण की बुनियादें यह खोदेंगे
फिरकाबंदी जातिवाद का झाड़ेंगे यह भूर्त
निविड़ विषमता को मिटाएँगे नवयुग के ·शश दुता।" [49]

इस तरह समाज में व्याप्त विषमता, कुरीतियों, शोषण ·· मिटाने का काम तरुण वर्ग कर सकता है, ऐसी नागार्जुन आशा रखते थे।

नागार्जुन रचित 'भूमिजा' खंडकाव्य में आच·· विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा हेतु राम और लक्ष्मण को अपने साथ ले जाना इसी का संकेत है।

गुरुवर विश्वामित्र वन में महायज्ञ ··ा रहे थे। मगर वहाँ के राक्षसों ने बड़ा उत्पात मचा रखा था। राक्षस यज्ञ को असफल बनाने पर तुलेहुए थे। उन्होंने वन में बड़ा ही विध्वंस मचा रखा था। महान ऋषि विश्वामित्र उनसे तंग आ ग··और वे सीधे राजा दशरथ के पास आयोध्या गए। वहाँ जाकर उन्होंने यज्ञ की रक्षा के हेतु ·· दशरथ से राम को माँगा। उन्हें पूरा विश्वास था कि अकेले राम ही उन राक्षसों का संहा·· देंगे। वे राजा दशरथ से कहते हैं - "राजकुमार रामचंद्र को आप मेरे साथ कर दीजिए, - अकेले ही राक्षसों का संहार कर देंगे।" [50] राजा दशरथ गुरुवर का आदेश मानकर राम ·· लक्ष्मण दोनों को विश्वामित्र के साथ भेज देते हैं। वन में राम अपने धनुर्विद्या के बल ·· ··ड़-बड़े राक्षसों एवं ताड़का राक्षसी को मार देते हैं। ताड़का राक्षसी का वर्णन विश्वामित्र इस ··र करते हैं -

"महाविकट राक्षसी ताड़का एक
दस हजार हाथी की जिसमें शक्ति।

इस वन पर है उसका ही अधिकार
चारों ओर मचा है हाहाकार !
नहीं इधर से आते-जाते पान्थ !
पशु, पक्षी भी उससे रहते दूर।
आसपास के ग्राम निगम देहात
उस दुष्टा ने डाले सभी उजाड़ !
लगा हुआ है कंकालों का ढेर !" [51]

ऐसी भयानक राक्षसी का राम अंत कर देते हैं।

महायज्ञ के बाद जब राम और लक्ष्मण गुरु विश्वामित्र के साथ जंगल में से जा रहे थे, तो मुनिवर गौतम का आश्रम मिला। मुनि गौतम ध्यान-धारणा में लीन थे। उन्हें प्रणाम कर राम और लक्ष्मण मुनि विश्वामित्र सहित आगे बढ़े तो झोपडी अस्त-व्यस्त दिखाई दी। तभी उनका ध्यान एक पाषाणी पर गया। पाषाणी को देखकर राम और लक्ष्मण चौंकते हैं। नारी जैसी प्रतिमा जमीन पर पथराई-सी पड़ी थी। विश्वमित्र के कहने पर राम ने पाषाणी के सिर से लेकर तलवे तक अंग-भंग कर स्नेह से हाथ फेरा तो उसकी आँखें खुलीं और वह सजीव सुंदर नारी में परिवर्तित हो गई -

"शिर से लेकर तलवे तक प्रत्यंग
लगे फेरने मनोयोग से हाथ
यातुधान की लीला-सी वह देह
हाडों का वह शिलीभूत संसार
हिला और बोला जब पहली बार
खुली पलक, टिमटिमा उठी फिर दृष्टि
हुए दीप्त सहसा गहरे दृग-कूप,
अधरों पर था स्पंदन का आभास
पुनः कराया कर-पल्लव-संस्पर्श
फिर चमकी आँखें, फिर फड़के ओठ !" [52]

पाषाणी, गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या थी, जो उन्हीं से शापित इस अवस्था में जी रही थी। राम ने उसका उद्धार किया तथा उसमें प्राण-संचार किया।

महर्षि विश्वामित्र के यज्ञ में राक्षसों ने जो उत्पात मचाया था, राम-लक्ष्मण उन्हें मारकर शांतिपूर्वक कार्यसिद्धि में सहायता करते हैं। उस वक्त जो शौर्य एवं वीरता राम और लक्ष्मण ने दिखाई वह बेजोड़ है। साथ ही ऋषि-पत्नी अहल्या का उद्धार करके उसे उन्होंने नया जीवन दिया। इन प्रसंगों से नागार्जुन ने उस युवा-शक्ति का परिचय दिया है, जो जनसामान्य के हित के लिए लड़ रहे थे। सामान्य जनता पर आई आपत्ति को टालने के लिए यह नवयुवक कटिबद्ध है।

आजादी के बाद देश की दुर्दशा देखकर कवि बेचैन हो उठते हैं। उनकी विचारधारा क्रांति की ओर उन्मुख हो उठती है। पीड़ित मानव की पीड़ा का नाश करने के लिए वे क्रांति की जरूरत महसूस करते थे और इस विद्रोह के लिए वे नवयुवकों को ललकारते हैं। यह विद्रोह

शोषक तथा विकृत पूँजीवादी व्यवस्था के विरोध में है। ताड़का राक्षसी उस शोषक समाज व्यवस्था का ही प्रतीक है, जिसे नष्ट करने के लिए राम और लक्ष्मण जैसे नवयुवकों की समाज को जरूरत है। साथ ही कवि नई पीढ़ी के युवकों से अपेक्षा रखता है कि वे अहल्या जैसी उपेक्षित एवं प्रताड़ित नारी के जीवन को नई दिशा देने का प्रयत्न करें। कवि को आशा है कि अहल्या जैसी अन्याय और उपेक्षा का पात्र बनी अहल्या का उद्धार आज के तरुण युवकों के ही हाथों में है।

इस तरह सामाजिक समस्याओं को हल करने के लिए कवि देश के नवयुवकों का सक्रिय सहभाग चाहते थे। नागार्जुन अपने काव्य के माध्यम से जनहित के लिए अव्यवस्था के खिलाफ लड़ने की प्रेरणा देते थे।

एकता-सहयोग पर विश्वास

कवि नागार्जुन को अपनी मातृभूमि के प्रति गहरा लगाव था। वह अपने देश की जनता को गुलामी, दासता एवं शोषण की ठोकरें खाता हुआ नहीं देख सकता। वह अपने देश की जनता को जाग्रत करता है। सामान्य जनों को एक दूसरे के सहयोग के बल पर कठिन से कठिन कामों को आसान बनाने की प्रेरणा देता है तथा शोषित जनता को एक होकर शोषकों के विरुद्ध लड़ने को उकसाता है। सहयोग से कठिनतम काम भी आसान हो जाता है।

नागार्जुन ने अपने 'भस्मांकुर' खंडकाव्य में सहयोग भावना का परिचय दिया है। इसमें 'मदन-दहन' की पौराणिक कथा को पद्यबद्ध किया है। महाबली तारकासुर सुर-समाज को परेशान कर रहा था। उसके पीड़ादायक कृत्यों से तंग आकर देवताओं ने विष्णु को आगे करके ब्रह्मा से असुरों से रक्षा की प्रार्थना की। ब्रह्मा ने इस समस्या पर उपाय बताया कि शिव-पार्वती से उत्पन्न शिशु तारकासुर का वध करेगा। परंतु इसके लिए शिव को पार्वती की ओर आकृष्ट करना होगा। शिव की तपस्या भंग करके पार्वती की ओर आकृष्ट करने का काम कामदेव को सौंपा गया।

वसंत कामदेव का अभिन्न सखा है, जो इस काम में कामदेव और रति को सहयोग देता है। वसंत मादकता और मोहजाल फैलाने में निपुण है। उसके कारण वातावरण में आकस्मित मादकता उत्पन्न होने लगती है। यहाँ तक कि हिरण तथा खरगोश में भी उसकी मादकता के कारण रोम रोम में प्यार छलक रहा है।

प्रस्तुत काव्य में वसंत कामदेव के सच्चे मित्र के रूप में चित्रित हुआ है। कामदेव को वसंत पर पूर्ण विश्वास है -

"सहज-सखा सहभोगी रुचिर वसंत
अंतिम क्षण तक देगा अपना साथ।" [53]

अपने कार्य में सहायत के लिए कामदेव द्वारा वसंत को बुलाने पर वसंत तुरंत ही मदन की सहायता करने तत्पर हो जाता है -

"लगा मित्र ने मुझे किया है याद
अभी भागता आया हूँ मैं" [54]

कवि ने कामदेव और वसंत के जरिए कार्य में सफलता पाने हेतु एक-दूसरे का सहयोग अपेक्षित माना है। साथ ही सुर-समाज के ऊपर आई हुई आपत्ति टालने हेतु सुर-समाज तथा देवताओं का एक-दूसरे के विचार-विनिमय से समस्या पर हल निकालना तथा काम और वसंत के माध्यम से प्रत्यक्ष सहयोग आदि बातों को दिखाकर समाज में एकता और सहयोग की भावना को दृढ़ करना चाहा है।

स्वाधीनोत्तर भारत में शोषकों के विरुद्ध सामान्य जन को एक होकर लडने की प्रेरणा भी इससे मिलती है। सामान्य जनता के सहयोग के बल पर ही पूँजीपतियों एवं भ्रष्ट राजनेताओं के खिलाफ आवाज उठाई जा सकती है। यह सत्य भी कवि यहाँ बता देना चाहते हैं।

कवि अपने दूसरे खंडकाव्य 'भूमिजा' के माध्यम से भी यह बात पाठकों को बता देना चाहते हैं।

ऋषि विश्वामित्र के यज्ञ पर राक्षस विध्वंस मचा रहे थे। यज्ञ अनुष्ठान पूरा करने में राक्षसों के उत्पात से कठिनाइयाँ आती थीं। इसपर विश्वामित्र अयोध्या जाकर राजा दशरथ की अनुमति से राम और लक्ष्मण को अपने साथ ले आते हैं। यज्ञ में उत्पात मचानेवाले ताड़का राक्षसी को राम एक बाण से ही मार गिराते हैं। जिससे विश्वामित्र जनकल्याण हेतु आरंभ किया हुआ यज्ञ सफलतापूर्वक पूरा करते हैं। यहाँ कवि ने ताड़का के मौत का वर्णन इस प्रकार किया है -

"राम ने ऐसा तीर छोड़ा कि वह धड़ाम से औंधे मुँह धरती पर गिर पडी और थोडी देर में दम तोड़कर मर गई।" [55]

इस प्रकार कवि ने विश्वामित्र और राम के द्वारा एक-दूसरे के सहयोग से असत प्रवृत्तियों का विनाश दिखा कर सहयोग की भावना पर जोर दिया है।

लोकहित की भावना

नागार्जुन सच्चे अर्थों में जनता के कवि थे। उनकी कविता का नायक हमेशा साधारण मनुष्य रहा है। उन्होंने लोकहित की भावना से प्रेरित होकर काव्यसृजन किया है।

नागार्जुन का सर्वाधिक झुकाव उस जनजीवन की ओर रहा है जो अभावों एवं विषमताओं की चक्की में पिस रहा है, जो निरंतर कठिनाइयों से जूझ रहा है, जो पूँजीवाक्ष दैत्यों के चंगुल में फँसा हुआ है। कवि का नारा 'बहुजनाहिताय' है। नागार्जुन ने कवि की हैसियत से अपनी भूमिका पर विचार किया था - "जनता मुझसे पूछ रही है क्या बतलाऊँ? जनकवि हूँ मैं साफ कहूँगा, क्यों हकलाऊँ?" [56]

नागार्जुन की कविता में जन-जीवन की आशा-आकांक्षा विद्यमान है। जनसामान्य तक अपनी बात पहुँचने के लिए उन्होंने अपने काव्य में भी लोकभाषा का उपयोग किया है। नागार्जुन के काव्य में जन-चेतना का स्वर सर्वोपरि है। वह अभावों से पीड़ित एवं शोषण से ग्रस्त जनजीवन के हित में लिखा हुआ है। उनकी रचनाएँ लोकहित की भावना से युक्त नजर आती है।

नागार्जुन ने 'लोक-हित' की भावना से अपने दोनों खंडकाव्य 'भस्मांकुर' और 'भूमिजा' का निर्माण किया है।

'भस्मांकुर' में सुरसमाज की भलाई के लिए ही शिव-पार्वती को परिणय-सूत्र में बाँधने का काम देवतागण कामदेव को सौंपते हैं। महाबली राक्षस तारकासुर से परेशान होकर देवताओं के कहने पर

कामदेव यह जिम्मेदारी अपने ऊपर लेता है। और अत्यंत मनपूर्वक वह अपना कार्य सफल होने हेतु प्रयत्न करता है। इस कार्य में उसे रति और वसंत भी सहायता करते हैं। कवि ने यहाँ लोकहित की भावना पर अधिक बल दिया है -

"अपनों के हित आऊँ यदि मैं काम
समझूँगा, सार्थक है अपना नाम"[57]

कामदेव के मुख से कवि ने यह बात कहलवाकर इसी लोकहित एवं समाजहित की भावना पर बल दिया है। साथ ही निम्न पंक्तियों से भी जनहित की भावना का प्रत्यय आता है -

"पूरा होगा सुरपति का अभिलाष
गौरी-नंदन, शिव का औरस पुत्र
वही करेगा तारक का संहार
सुर-समूह की चिंता होगी दूर"[58]

यहाँ कवि ने कामदेव के मुँह से यह बात बताकर जन-जीवन की चिंता दूर करने की आशा प्रकट की है। सामान्य जन की पीड़ाओं का अंत कर उनका उद्धार करने की प्रेरणा कवि ने अपने काव्यों के माध्यम से दी है।

'भूमिजा' काव्य में राजा राम को कवि ने प्रजाहितैषी राजा के रूप में दिखाया है।

चौदह वर्ष वनवास के बाद तथा लंका विजय के उपरांत राम अयोध्या लौटकर राजगद्दी पर बैठते हैं। वह अपने गुप्तचरों से राज्य के बारे में टीका-टिप्पणी सुनते थे। एक दिन एक गुप्तचर से उन्हें पता चला कि एक धोबी ने सीता के चरित्र पर उंगली उठाई। राजा राम प्रजा हित के लिए अपनी पतिव्रता पत्नी सीता को गर्भावस्था में वन भेज देते हैं। सीता पवित्र है, विशुद्ध है, उनमें कलंक का लेशमात्र भी नहीं। स्वयं अग्नि ने राम के समक्ष सीता की पवित्रता का प्रमाण पेश किया था। परंतु यह सब जानबूझकर भी राजा राम बिलकुल निरुपाय हो रहे थे। प्रजा को प्रसन्न रखना ही राम के लिए सबसे महान आदर्श था। प्रजा के आगे राम को न तो सीता की परवाह थी, न लक्ष्मण की और न स्वयं की।[59] यहाँ कवि ने लोकहित की भावना के साथ ही एक सच्चे शासक के लक्षण भी बताए हैं।

स्वाधीनोत्तर भारत में मोहभंग की स्थिति उत्पन्न हो गई। स्वाधीनता से पहले जनता ने जो रामराज्य के सपने देखे थे वे चकनाचुर हो गए। स्वदेशी शासकों की अवसरवादिता पर कवि ने व्यंग्य किया है। स्वाधीनोत्तर भारत में शासक वर्ग ने जनता के प्रश्नों पर ध्यान न देकर व्यक्तिगत स्वार्थ ही निकालना चाहा। कवि व्यक्तिगत दुःख पर न रुककर व्यापक जनसमूह की पीड़ाओं पर प्रकाश डालना चाहते हैं। कवि नागार्जुन के बारे में विश्वंभर मानव की यह टिप्पणी सचमुच सार्थक प्रतीत होती है। "व्यक्तिगत दुःख पर न रुककर वे बार-बार व्यापक दुःख पर प्रकाश डालते हैं और यही सच्चे कवि की पहचान है। अतः धरती, जनता और श्रम के गीत गाने वाले इस युग के संवेदनशील कवियों में नागार्जुन का नाम सदैव अमर रहेगा।"[60]

व्यसनाधीनता -

आधुनिक युग में मनुष्य अनेक व्यसनों के साथ जी रहा है। आधुनिक ही नहीं बल्कि प्राचीन काल से मनुष्य विविध प्रकार के व्यसनों में डूबा हुआ है। पौराणिक युग में भी देवताओं के 'सोमरस'

प्राशन करने की जानकारी हमें मिलती है। नागार्जुन एक स्वस्थ समाज की कल्पना करते थे। क्योंकि नशा मनुष्य का विवेक खो देता है तथा समाज में स्वैराचार फैलता है।

आधुनिक भारत की युवा पीढ़ी को व्यसनों में लिप्त देखकर नागार्जुन का हृदय व्यथित हो उठता था। इसी कारण उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से इस समस्या की ओर संकेत किया है।

नागार्जुन ने 'भस्मांकुर' में मदिरापान की ओर संकेत किया है। रति, कामदेव और वसंत हास-विलास एवं मनोविनोद में मदिरा का सेवन भी करते हैं। कहना न होगा नशे की स्थिति में विवेकबुद्धि ठीक तरह से कार्य नहीं करती और ऐसी हालात में कुछ निरर्थक बातें कह दी जाती हैं। एक बार नशे में रति भगवान शंकर के बारे में कुछ ऐसी ही बातें कर बैठती है, तो कामदेव उसे फटकारता है -

"हुआ क्या तुझको आज?
बकती क्या-क्या बातें ऊटपटाँग!
पगली, तू होती है इनके कौन?
हाँ, हाँ निश्चय, अधिक पी गई आज ...
खीचूँगा मैं तो वसंत के कान ..."[61]

आज भी कुछ लोग प्रायः किसी कार्य का आरंभ करने से पूर्व मदिरा-पान करना श्रेयस्कर समझते हैं और मदिरा के साथ-साथ विविध प्रकार के सुस्वाद पदार्थों का सेवन भी करते हैं। कवि ने इस ओर भी संकेत किया है -

"चला देर तक उनका वह मधुपान
वर्ण-गंध-रुचि खींच रहे थे ध्यान
खटरस फल थे सज्जित विविध प्रकार
बीच-बीच में बदला जिनसे स्वाद
पत्र-चषक भरते, तिर उठती आप
रति के रतनारे नयनों की छाप।"[62]

नशे की हालात में एक बार वसंत भगवान शंकर के बारे में कुछ निरर्थक बातें कर बैठता है। रति को देखकर वह कामदेव से कहता है -

"तुम जाओ, बूढ़े का करो इलाज
भाभी को चाहे ले जाओ साथ
मगर इन्हें तुम रखना अपने पास
मत करना उस खूसट पर विश्वास
पकड़ लिया यदि शिव ने रति का हाथ
सोचो गौरी का होगा क्या हाल...।"[63]

भगवान शंकर के मन में काम प्रवृत्ति निर्माण करना बड़ा ही कठिन काम था। ऐसी स्थिति में उनके बारे में इस प्रकार की अशोभनीय बातें वसंत केवल मदिराधिक्य में ही कह सकता है। यह एक प्रकार से मदिराधिक्य की बीभत्सता की ओर संकेत है।

इस प्रकार कवि ने आधुनिक भारतीय समाज में व्याप्त तरुण वर्ग की व्यसनाधीनता को 'भस्मांकुर' के माध्यम से प्रकट किया है। विशेषतः आधुनिक युग में इस चक्र में नारी भी पिछे नहीं है। इसके साथ ही मजाक ही मजाक में उन बूढ़े एवं खूसट व्यक्तियों की मनोवृत्ति पर भी शंका प्रकट की है, जो प्रायः सुंदर युवतियों को देखकर अपना होश-हवास खो बैठते हैं और उनका हाथ पकड़ने में भी किंचित भी शर्म नहीं महसूस करते।

नागार्जुन के आधुनिक राजनीतिक विचार -

राजनीतिक षड्यंत्रों का समाज की प्रत्येक गतिविधि पर प्रभाव पड़ना सहज स्वाभाविक है। वास्तव में आज समाज के हर क्षेत्र में स्वार्थ जीवी लोग विद्यमान है। ये लोग सदैव ही 'स्वहित पूर्ति' के लिए प्रयत्नरत रहते हैं। अपने स्वार्थ के लिए ऐसे लोग निम्नवर्ग को मोहरा बना देते हैं। तथा अपने स्वार्थसिद्धि के लिए इस निम्नवर्ग का उपयोग करते हैं। नागार्जुन जैसे सजग कवि ने इसे भलीभाँति जाना था और अपनी कविताओं में उन्होंने व्यंग्य एवं विद्रोह के माध्यम से राजनीतिक अव्यवस्था का चित्रण किया है।

मालिक-मजदूर समस्या/संघर्ष

नागार्जुन ने मालिकशाही की विकृति को निकट से देखा था, अनुभव किया था। कवि ने 'भस्मांकुर' काव्य के द्वारा वर्ग - वैषम्य/सामाजिक विषमता का चित्रण करके उसे दूर करने का प्रयास किया है साथ ही वर्तमान व्यवस्था में व्याप्त कुचक्र के नीचे सामान्य जन किस प्रकार घसीट रहा है इसका सजीव चित्रण इंद्रदेव को मालिक के रूप में और कामदेव को नौकर के रूप में दिखाकर किया है। आर्थिक तथा सामाजिक विषमता से क्रोधित होकर उन्होंने व्यवस्था में ऐसा परिवर्तन चाहा है जहाँ पूँजीपतियों का राज न हो, गंदी राजनीति न हो।

महाबली तारकासुर से संत्रस्त होकर सभी सुरगण ब्रह्मा के पास गए और उनसे तारकासुर के वध का उपाय पूछा। ब्रह्माजी ने कहा कि यदि शिवजी हिमालय की पुत्री पार्वती से विवाह कर लें, तो उनके पुत्र द्वारा इसका संहार हो सकता है। उस समय शिव जी तपस्या कर रहे थे और उनका मन पार्वती की ओर आकृष्ट करना कठिन कार्य था। देवताओं के राजा इंद्र ने यह महत्वपूर्ण कार्य काम देव पर सौंपा। काम देव ने कितने ही ऋषि-मुनियों की समाधि भंग की है और इंद्र की आज्ञा का पालन किया है। इंद्र के संदेश पर कामदेव इंद्र के पास आकर अत्यंत विनम्र भाव से पूछता है - "प्रभु, वह कौन-सा काम है जिसके लिए आपने मुझे याद किया है? आप बतला तो दो उसका नाम! वह कौन है जिसने आपको परेशान कर रखा है? क्या वह कोई नारी है जो आपके हृदय को मथित कर रही है मगर पास नहीं आ रही है? पुरुष हो चाहे स्त्री, जो भी आपकी अशांति का कारण बना हो या बनी हो, आप उसका नाम-भर बतला दो मुझे! फिर देखिए कि कैसे में उसे आपकी शरण में ले आता हूँ! आपकी आज्ञा हो तो मैं ध्यानमग्न शिव के भी छक्के छुड़ा दूँ..."[64]

कामदेव के इस कथन से इंद्र एक मालिक के रूप में और कामदेव एक सेवक के रूप में दृष्टिगत होता है। जो मालिक के इशारे पर कठिनतम कार्य भी सहज स्वीकार करता है। स्वीकार ही नहीं करता बल्कि मालिक के एक इशारे पर अपने प्राणों की आहुति भी देता है।

सुरसमाज द्वारा रचाया गया शिव-पार्वती के विवाह का सोंग रति को बिल्कुल भी ठीक नहीं लगता। वैसे भी वह महारुद्र शिव के क्रोधी स्वभाव से परिचित होने के कारण उसे अपने पति की चिंता लग रही थी कि कहीं शिव के क्रोध का पात्र, कामदेव को न बनना पडे। वह कामदेव से कहती भी है -

"मना रही मैं सिर्फ तुम्हारी खैर
वे ठहरे देवाधिदेव सर्वेश
लेकिन, तुम हो दीवाने दरवेश।" [65]

रति के इस कथन से कवि ने यहाँ वर्ग-वैषम्य को प्रकट किया है। देवाधिदेव इंद्र स्वदेशी पूँजीवादी शासक वर्ग का प्रतिनिधि है और कामदेव उस निम्नवर्ग का प्रतिनिधि पात्र है जो मालिक के इशारों पर नाचता है।

आज तक अनेकों की तपस्या भंग करने का काम मदन ने किया था। परंतु शिव की तपस्या भंग करने में वह साहस नहीं जुटा पा रहा था। उसने इंद्र से काम पूरा करने का जो वादा किया था, उसे पूरा करने का वह साहस बटोरता है। अपनी लक्ष्य सिद्धि के लिए फिर से प्रयत्न करता है और शिवाजी की तपस्या में बाधा पहुँचने के कारण वे उसे भस्म कर देते हैं। मदन के भस्म हो जाने पर रति विलाप करती हुई कहती है -

"छलिया निकला निखिल देव समुदाय
यों ही मैं लुट गई अभागिन, हाय
मन ही मन आतंकित थी, प्राणेश!
आह, अंततः फूट पड़ा दुर्देव
विश्वविदित हैं सुरपति के छलछद
स्वामिभक्ति में भाग्य पड़ गया मंद।" [66]

इस प्रसंग के माध्यम से कवि यह बताना चाहते हैं कि मालिक के इशारे पर मजदूर एवं नौकर अपनी जान पर खेलकर कोई महत्वपूर्ण कार्य करता है। यह काम करते वक्त उसकी जान भी जा सकती है। परंतु मालिकशाही के कपट व्यवहार से तो सारी दुनिया परिचित है, जो अपना काम निकालने के लिए नौकरों से मनचाहा बर्ताव करते हैं और अगर इसमें नौकर की जान को खतरा हुआ तो विलाप करती हुई उसकी पत्नी को आश्वासन देकर चुप कराते हैं। कवि ने 'भस्मांकुर' में ऐसी ही आश्वासन की आकाशवाणी की उद्भावना की है -

"रति-वसंत दोनों हो गए सतर्क
सुने उन्होंने आश्वासन के शब्द" [67]

'भस्मांकुर' के द्वारा कवि ने भारतीय समाज में मालिकशाही, पूँजीवादी व्यवस्था के विकृत रूप का दर्शन कराया है। साथ ही निम्नवर्ग की विवशतापूर्ण जिंदगी को भी चित्रित किया है।

स्वदेशाभिमान

नागार्जुन का कहना है कि देश के हर इन्सान को संकुचित वृत्ति को त्यागकर जनकल्याण की विस्तारित दृष्टि को अपनाना चाहिए।

कवि ने 'भस्मांकुर' में 'कामदेव' को इसी रूप में चित्रित किया है। सुरसमाज के कल्याण हेतु कामदेव अपने प्राणों का बलिदान दे देता है। तत्पश्चात आकाशवाणी होती है -

"कौन मदन, तुमको कर सकता नष्ट?
जयति जयति भस्मांकु, जयित अनंग..." [68]

विदेही अनंग मरा नहीं तो उस भस्म से उसका जब निर्माण होगा, वह जीता ही रहेगा, उसकी जय होगी। कवि यहाँ कामदेव द्वारा संकेत करता है कि राष्ट्र के लिए, राष्ट्र के कल्याण के लिए किया हुआ बलिदान व्यर्थ नहीं जाता। राष्ट्र को मदन जैसे शहीदों की जरूरत है। जो सच्चे वीर होते हैं, वे मदन की तरह पूरी निष्ठा और लगन से कार्य करते रहते हैं। उनके बलिदान से प्रेरणा पाकर और शहीद निर्माण होते हैं - राष्ट्रकल्याण हेतु।

नागार्जुन 'भूमिजा' में राम और लक्ष्मण के आपसी संवादों के द्वारा भी देशप्रेम की झलक दिखलाई है।

राम और लक्ष्मण मुनि विश्वामित्र के साथ यज्ञरक्षा हेतु जा रहे थे। अपना राज्य छोड़कर विश्वामित्र के साथ जाते वक्त उन्हें अपना राज्य, परिवार जन याद आने लगते हैं। उनके आपसी संवादों से अपने देश, अपनी भूमि के प्रति अभिमान दृष्टिगत होता है -

"धन्य हमारा कोसल जनपद धन्य!
सुजल सुफल बहुविध धनधान्य समेत
लता-गुल्म-तृण-तरु-वल्ली-परिण्याप्त!
सरयूजल-अभिसिंचित स्फीत समृद्ध!
सुर-नर-मुनि मनमोहन परम ललाम!
नहीं मिलेगी ऐसी उर्वर भूमि
नहीं मिलेगा ऐसा सुंदर देश
कहीं चराचर किंवा त्रिभुवन मध्य,
ऐसी मिट्टी नहीं मिलेगी तात!
धन्य हमारा कोसल जनपद धन्य!" [69]

यहाँ कवि ने राम और लक्ष्मण से देश का गुणगान गाकर जनसामान्य स्वदेशाभिमान में जगाने का प्रयास किया है।

न्यायव्यवस्था

अन्याय के खिलाफ विद्रोह नागार्जुन की विशेषता रही है। न्यायव्यवस्था दोषपूर्ण हो गई है। सामान्य जनता को न्याय मिलना दुष्कर हो गया है। कानून आज मृत हो गया है।

व्यायव्यवस्था में शासकों का मनमानी कारोबार तथा एकपक्षीय न्याय प्रक्रिया के खिलाफ कवि के मन में आक्रोश पैदा होता था, जिसे कविता के माध्यम से अभिव्यक्ति मिलती थी।

नागार्जुन ने 'भूमिजा' में दोषपूर्ण न्यायव्यवस्था को चित्रित किया है।

चौदह वर्षों के वनवास के उपरांत तथा अयोध्या की राजगद्दी पर बैठने के बाद राजा राम अयोध्या का सूत्रसंचालन अपने हाथों में लेते हैं। राज्य कारोबार चलाते वक्त वे राज्य की सभी

जानकारी प्राप्त करने के लिए गुप्तचर नियुक्त करते हैं। एक दिन दूत से जब उन्हें पता चला कि प्रजावर्ग में एक धोबी ने सीता के चरित्र पर उंगली उठाई है तो वे तुरंत ही गर्भासन्न अवस्था में सीता का त्याग कर देते हैं एवं उसे वनवास भेज देते हैं। यहाँ राम एकपक्षीय मर्यादा और झूठी प्रतिष्ठा के अनुशासक के रूप में वर्णित है। यहाँ राम अफवाहों पर विश्वास करते हैं मगर सच्चाई की जाँच-पड़ताल किए बिना ही सीता को सजा दे देते हैं। सीता 'भूमिजा' में इस अन्याय के प्रति आक्रोश करती है -

"हाय रे राजा! हाय री नीति!
हाय री रुढ़िबद्ध जन-भीति!
हाय रे पुरुष! हाय रे दंभ!
हाय रे एकपक्षीय वह न्याय
इकहरी मर्यादा का बोध
करे साडंबर नारी-मेध
बने पुरुषोत्तम जग-विख्यात!" [70]

यहाँ सीता के माध्यम से कवि उन शासकों के प्रति आक्रोश व्यक्त करते हैं, जो झूठी प्रतिष्ठा, नाम, यश-कीर्ति पाकर इतिहास में यादगार बनने के लिए बेकसूर को सजा देते हैं, जो राम जैसे शासक को भी शोभा नहीं देता। आदर्श शासक का यह कर्तव्य है कि पहले सही जाँच-पडताल करे और यदि अपराधी का दोष सिद्ध हुआ तो फिर उसे सजा दी जाए। न्यायप्रक्रिया एकपक्षीय नहीं होनी चाहिए। अपराधी को भी उसकी बात कहने का मौका दिया जाए।

विश्व-शांति; साम्राज्यवादियों का एकाधिकार -

दुनिया में जहाँ भी दमन और संघर्ष है, नागार्जुन की सहृदयता भौगोलिक सीमाएँ तोड़कर जनता की तरफदार बनती है। कवि विश्व में शांति देखना चाहते थे। किसी भी देश में जनता पर अत्याचार वे नहीं देख सकते थे।

आंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में विज्ञान की प्रगति के परिणाम स्वरूप एटम और हाइड्रोजन बमों के राकेट सारी मानव-जाति को नष्ट-भ्रष्ट कर देने में समर्थ है।

नागार्जुन ने 'भस्मांकुर' में मदन-भस्म प्रसंग को इसी परिप्रेक्ष्य में देखा है।

तपस्या में लीन शिवजी का ध्यान पार्वती की तरफ आकृष्ट करने का काम काम देव को सौंपा गया था, जिसमें कामदेव सफल हो भी गया परंतु शिव जैसे महान देवता के क्रोधाग्नि का शिकार उसे होना पड़ा। तपस्या भंग होने के कारण शिव जी अपना तृतीय नेत्र खोलकर कामदेव को क्षण में भस्म कर देते हैं। मदन भस्म हो जाने के उपरांत रति विलाप करती हुई कहती है -

"कुसुम-सुकोमल-प्रतिपक्षी पर हाय
बरसा दी उसने सौ मन बारुद" [71]

'भस्मांकुर' में कामदेव जैसे सुकोमल प्रतिपक्ष पर शिव जैसे प्रबल पराक्रमी को प्रहार करता देख, ऐसा लगता है, कवि के मस्तिष्क में, विश्व के शक्तिशाली राष्ट्रों द्वारा कमजोर देशों पर किए जा

रहे आक्रमणों की स्मृति उभर रही है। यहाँ शिव के माध्यम से कवि का स्पष्ट संकेत अमरीका जैसे आक्रमक राष्ट्रों की ओर प्रतीत होता है, जो छोटे राष्ट्रों पर आक्रमण कर रहे हैं।

नागार्जुन के धर्मसंबंधी विचार -

प्राचीन काल से ही हमारे देश में जाति-पाँति, धार्मिक आडंबर, सडी-गली रूढ़ियाँ एवं अंधविश्वास चले आ रहे हैं।

समाज में कुछ परंपरा से चली आई मान्यताएँ होती हैं, जिसे विज्ञान के आधार पर न परखते हुए किसी एक के कहने से समाज उसपर विश्वास करता है। समाज के कुछ स्वार्थी लोग धर्म का भय दिखाकर या कोई चमत्कार उत्पन्न कर जनता को फँसाते हैं। भोली-भाली जनता ऐसे अंधविश्वासों पर यकिन करती है। अर्थात 'बिना देखे, जाँचे, परखे किसी बात पर विश्वास करना ही अंधश्रद्धा या अंधविश्वास है। इससे समाज का नुकसान होता है। समाज अज्ञानी, अनपढ़ एवं गरीब जनता ही प्रायः इसका शिकार होती है।

नागार्जुन को धर्म के नान पर आडंबर रचानेवालों के प्रति अत्यंत घृणा थी। कवि जानते थे कि अधिकांश भारतीय जनता धर्म में विश्वास रखती है तथा धर्म के नाम पर कर्मकांड, पशुबलि, यज्ञ-याग आदि आडंबर करती है। कवि को पहले से ही आडंबर के प्रति अत्यंत घृणा थी।

साधुओं का पर्दाफाश -

आधुनिक युग में शिक्षा के प्रसार के कारण जनता अब सचेत हो रही है फिर भी भारतीय समाज की, विशेषतः देहातों की बहुतांश जनता अब भी अंधविश्वासों में विश्वास रखती है। अंधश्रद्धालुओं तथा उनकी श्रद्धा का आज के साधु फायदा उठाते हैं। कवि ने ऐसे साधुओं पर व्यंग्य कसा है।

नागार्जुन ने अपने खंडकाव्य 'भस्मांकुर' में शिव को साधु के रूप में चित्रित करके आज के साधुओं को बेनकाब करने की कोशिश की है।

यहाँ कवि ने शिव जी के साधु रूप का इस प्रकार वर्णन किया है -

"देवदारु द्रुम-विरचित-वेदी मध्य
व्याघ्र चर्म पर, पद्मासन-आसीन
शोभित हैं चिर जागरुक शिवशंभु
अर्ध निमीलित नेत्र, पलक निस्पंद
अचपल मणिगोलक नासाग्र विबद्ध
मेरुदंड अति उन्नतस कचि थिरमूल
निहित गोद में पाणि युगल उत्तान
यद्यः विकसित शुचि वाजीव समान
कर्णाभूषण अभिसूचित्र रुद्राक्ष
मौलिमाल लालन लौलित युव नाग
चाट रहे पीछे से सुरसरि फेन
रुचिर हार नागेंद्र, नाग केयूर
नाग वलय, अँगुलिभूषण शिशुनाग

तक्षक, वासुक शेष सभी मौजूद
सब हाजिर हैं, प्रिय षार्षद की भाँति
प्रतिपल प्रभु का चोला रहे अगोर" [72]

इस वर्णन से नागार्जुन साधु का हुबहू चित्र हमारे सामने खड़ा कर देते हैं।

नागार्जुन ने अपने घुमक्कड़ी में प्रवास के दौरान ऐसे कई साधुओं को देखा था, उनका आडंबर जाना था। जनता ऐसे लोगों को ही देवता मानकर पूजती थी। इन साधुओं के बारे में कवि रति के माध्यम से कह रहे हैं -

"सच, क्या थे वह करुणा के अवतार?
जप-तप-संयम, था क्या सारा ढोंग?
कंठ नील था, दिल भी था क्या स्याह!।" [73]

जप-तप का ढोंग करके कुछ साधु लोग जनता की दिशाभूल करते हैं। यहाँ प्रश्नचिह्न से कवि इसी ओर इंगित करना चाहते हैं।

अंधविश्वासों का खंडन -

भारतीय जनता प्राचीन काल से अंधविश्वासों का शिकार रही है। बदलते युगानुरूप, शिक्षाप्रसार के कारण आधुनिक युग में कई लोग अंधविश्वासों का विरोध करते दिखाई देते हैं परंतु कई लोग आज भी ऐसे ही हैं, जो इन पुरानी अंध मान्यताओं पर विश्वास रखते हैं। इसमें अधिकांश नारीसमाज होता है। कवि ने अपने खंडकाव्यों में इन अंधविश्वासों का खंडन किया है।

'भस्मांकुर' की रति एक ऐसा पात्र दिखाया है, जो अंधविश्वासों में विश्वास रखती है। सुरसमाजद्वारा उसके पति कामदेव को शिव की तपस्या भंग करने का जो महत्वपूर्ण कार्य सौंपा गया था, उसके बारे में रति के मन में बार-बार अशुभ विचार आते हैं तथा उसकी दाँई आँख फड़क उठती है। स्त्रियों की दाँई आँख फड़कना अमंगलकारक समझा जाता है।

"बार-बार आते थे अशुभ विचार
फड़क फड़क उठती थी दाँई आँख" [74]

कवि नागार्जुन ने अपने दूसरे खंडकाव्य 'भूमिजा' में त्रिजटा को भोर के वक्त पड़े स्वप्न से भी यही अंधविश्वासों की बात बतलाई है।

रात्रि के अंतिम प्रहर में त्रिजटा अपनी सखी सीता को स्वप्न में नदी में डूब जाते हुए देखती है और इसलिए तुरंत सीता से मिलने आती है। रति के अंतिम प्रहर में देखा हुआ स्वप्न सच होता है, ऐसा माना जाता है -

"रात्रिशेष में देखा था दुःस्वप्न...
गई सखी वन्या-प्रवाह में डूब
जाऊँ, देखूँ हाल करूँ मालूम" [75]

वर्तमान युग में स्थित इन अंधविश्वासों का खंडन करके आधुनिक मनुष्य को वैज्ञानिक जीवन दृष्टि अपनाकर जीवनयापन करने की कवि अपेक्षा करता है।

नारीविषयक विचारधारा -

प्राचीन काल से ही महत्वपूर्ण स्थान की अधिकारिणी नारी को भारतीय समाज में 'अर्धांगिनी' जैसे गौरवपूर्ण संबोधन से पुकारा गया है। आज भी उस यज्ञ को अधूरा माना जाता है जिसमें नारी का सहभाग न हो। आधुनिक युग में धीरे-धीरे भारतीय मानसिकता में बदलाव आया और आदर्शवादी चिंतन के स्थान पर यथार्थ चिंतन को बढ़ावा मिला। नारी संबंधी विचारों में भी काफी बदलाव आया। नारी को देवी के स्थान पर मानवी समझने का प्रयास आरंभ हुआ। साथ ही उसकी समस्याओं के प्रति भी मानवीय दृष्टिकोण से सोचना आरंभ हुआ।

नागार्जुन ने अपने काव्य में स्त्री को मानवी रूप में चित्रित किया है। उनको नारीसमाज से बहुत अधिक सहानुभूति रही है। उन्होंने हमेशा नारी-वर्ग को समाज का सक्रिय अंग बनाने का प्रयास किया है। नागार्जुन के काव्य में चित्रित नारी परिवार तथा समाज द्वारा त्रस्त होते हुए भी सदैव कर्तव्यरत रहकर ऊँचा स्थान पा सकी है।

नारी शोषण का विरोध -

प्राचीन काल से ही परिवार एवं समाज द्वारा नारी का शोषण होता आया है। नागार्जुन मजदूर एवं किसान के समान नारी को भी शोषित ही मानते थे। जो युगों से सामंतवाद की कारा में पुरुष दासता की लोहमयी शृंखलाओं में आबद्ध रूप में पड़ी हुई थी। वह अपना स्वतंत्र अस्तित्व खो चुकी थी। पतिव्रत्य और धर्म बंधनों के शिकंजो में आबद्ध नारी युगों से पीड़ित और शोषित रही है। श्रमिकों के समान स्त्री भी शोषण का साधन बनी है। आधुनिक कवि नागार्जुन ने इस अंतर्विरोध को पकड़ना एवं उसे यथार्थ परिप्रेक्ष्य में चित्रित करना आवश्यक समझा। उन्होंने नारी को उसके स्वतंत्र अस्तित्व एवं उसकी शक्ति से परिचित कराते हुए उसमें संघर्ष का क्रियात्मक भाव पैदा करना अपना कर्तव्य समझा।

नागार्जुन ने 'भूमिजा' की सीता और अहल्या को शोषित नारी के रूप में दिखाकर नारी-शोषण का विरोध किया है।

लंकाविजय के उपरांत और राम के शिबिर में आने के बाद सीता को अपनी पवित्रता प्रमाणित करने के लिए अग्नि-परीक्षा देनी पड़ी। केवल लोकमर्यादा के खातिर अपने आपको इसप्रकार प्रस्तुत करना उसे बुरा लगा फिर भी वह चुप रही। इसके बाद अपने कर्तव्य का पालन करते हुए राजा राम को दूत ने बताया कि सीता के चरित्र पर एक धोबी ने उंगली उठाई है तो प्रजाहितैषी राम ने सीता को पुनः वनवास दे दिया, वह भी ऐसी अवस्था में जब वह गर्भवती थी। अपनी असहाय अवस्था में सीता ने वन में सजा काटने का निश्चय इसीलिए किया ताकि वह अपने दोनों बच्चों को जन्म दे सके।

सीता का परित्याग नारी शोषण का ही उदाहरण कहा जा सकता है। अहल्या उद्धार के बाद श्रीराम अहल्या से नारी के प्रति कभी भी क्रूर न होने की शपथ लेकर मानो नारी शोषण का विरोध ही किया है।

"छूकर, अंब, तुम्हारे दोनों पैर
होता राघव राम प्रतिज्ञा बद्ध

जीवनभर वह तुम्हें रखेगा याद
नारी के प्रति कभी न होगा क्रूर
नहीं करेगा वह दूसरा विवाह
सदा रहेगा एक पत्नी-व्रत शील

\- - - -

कभी न मेरे अंतः पुर के मध्य
होगा षोडशियों का जमघट व्यर्थ
नहीं करूँगा सपने में भी, अंब
क्रयक्रीत दासी का भी अपमान..." [76]

कवि ने यहाँ राम की प्रतिज्ञा के माध्यम से वर्तमानयुगीन नारी शोषण का विरोध कर नारी को सम्मान देने का संकेत दिया है। साथ ही समकालीन बहुविवाह प्रथा का विरोध करके एक पत्नी-व्रत लेने का उपदेश दिया है। बहुविवाह प्रथा आधुनिक युग में बंद हो गई है। फिर भी आज कई लोग एक साथ अनेक पत्नियाँ रखते हैं, इस ओर कवि का संकेत रहा है।

बलात्कार नारी शोषण का ही एक अंग है। वर्तमान युग में इस समस्या ने बड़ा ही विकृत रूप धारण कर लिया है। कवि ने इस समस्या का घोर विरोध किया है।

'भूमिजा' में अहल्या के रूप पर आसक्त होकर इंद्रद्वारा छल से उसे पाने की की हुई कोशिश बलात्कार की समस्या को इंगित करती है। देवराज इंद्र अहल्या के सौंदर्य पर आसक्त होकर प्रजापति से अहल्या को माँगते हैं परंतु इंद्र के स्वभाव से परिचित प्रजापति अहल्या को इंद्र को सौंपने से इन्कार कर देते हैं। तब कामाग्नि में जला हुआ इंद्र एक दिन छल से अहल्या का सर्वस्व लूटते हैं।

"नहीं करूँगा सपने में भी, अम्ब
क्रयक्रीत दासी का भी अपमान..." [77]

राम की इस प्रतिज्ञा से कवि हमें आधुनिकता बोध कराते हैं कि आदर्श शासक, या कोई भो मालिक वही है, जो खरीदी हुई दासी का भी कभी अपमान न करे तथा उसे सम्मान दे तात्पर्य समाज के पुरुष वर्ग से कवि ने यही अपेक्षा रखी है कि पुरुषवर्ग नारी को उचित सम्मान दें, तथा उसकी तरफ भोगपरक दृष्टि से न देखकर मानवीय दृष्टि से देखे।

अनमेल विवाह संबंधी विचार

नागार्जुन जनता के पक्षधर कवि होने के कारण उन्होंने देश में स्थित समकालीन नारी समस्याओं को अपने साहित्य में रेखांकित किया है। बालविवाह, दहेज, पर्दाप्रथा, अनमेल विवाह, वैधव्य आदि के कारण स्त्रियों का व्यक्तित्व-विकास अवरुद्ध हो गया था। नागार्जुन जैसे चेतना संपन्न साहित्यकार एवं कवि का इन रुढ़ियों के विरुद्ध देश में जनजागृति लाना स्वाभाविक ही था। नागार्जुन अनमेल विवाह पद्धति के पूर्णतया विरोधी थे।

कवि ने 'भस्मांकुर' में अनमेल विवाह की बुराई की ओर संकेत किया है।

सुरसमाज के हित के लिए सुरगण शिव और पार्वती को परिणय सूत्र में बांधने की योजना करते हैं। इसके लिए आवश्यक है समाधिस्थित शिव का पार्वती की ओर ध्यान आकृष्ट करना। यह काम

कामदेव को सौंपा जाता है। इस अवसर पर रति कामदेव को शिव-पार्वती के बेमेल जोड़े के बारे में कहती है -

"बतलाओ, क्या रह जाता है शेष
जरठ हृदय में बिंदु-मात्र भी स्नेह
आखिर वह सुकुमारि
क्यों बूढ़े को करने लगी पसंद?
क्या अनमेल समागम है अनिवार्य?" [78]

वह इस बारे में सुरसमाज की निंदा करती हुई कहती है -

"सुरसमाज की बुद्धि हो गई भ्रष्ट
करते हैं कैसे-कैसे खिलवाड
बस यों ही ये ब्रह्मा-विष्णु-महेश..." [79]

नागार्जुन रति के इस कथन से इस बात की ओर संकेत कर रहे हैं कि आधुनिक युग की कोई भी युवती किसी वृद्ध से विवाह करना पसंद नहीं करेगी। कवि का उक्त कथन आधुनिक युग को मनोवृत्ति का ही परिचायक है। साथ ही कवि ने उस समाज पर भी व्यंग्य किया है, जो अनमेल विवाह कराने में सहायक होता है। पार्वती के स्वप्न की चर्चा भी इसी ओर संकेत करती है।

कवि ने तरुण गिरिजा के स्वप्न की कल्पना करके कथा को नवीन मोड़ ही नहीं दिया है बल्कि यह मनोवैज्ञानिक सत्य भी बताया है कि एक युवती सदैव युवा वर के ही स्वप्न देखा करती है। वह अपने लिए तरुण तथा योग्य वर की कामना करती है। वैसे भी आज के युग में युवती वर-चयन के लिए स्वतंत्र है। अतः तरुणी गिरिजा का स्वप्न में तरुण शंभु के साथ विचरण करना, उनसे विवाहपूर्व स्वप्न में मिलना तथा प्रेम प्राप्त करना आदि बातें आधुनिक युग के सर्वथा अनुकूल ही है।

"हमने देखे स्वप्न तुम्हारे साथ!
गौरी तरुणी, तरुण-तरुण शिवनाथ..." [80]

कवि का उक्त कथन भी आधुनिक युग की नारी की मनोवृत्ति का ही परिचायक है। नागार्जुन ने समकालीन अनमेल विवाह समस्या का कड़ा विरोध किया है एवं नारी को इस समस्या से मुक्ति दिलाने का प्रयास रहा है। यहाँ कवि रति के माध्यम से अपने ही विचार समाज के आगे रख रहा है। क्योंकि अनमेल विवाह के परिणाम कवि ने देखे हैं, जो नारी को अनैतिकता की ओर ले जाते हैं। युवती को योग्य वर के साथ परिणय में बांधने का संकेत कवि ने 'भस्मांकुर' के माध्यम से दिया है।

पति-पत्नी संबंध विच्छेद -

समाज की ईकाई है परिवार और परिवार में सुखद और अंतरंग संबंध पति-पत्नी के होते हैं। पति-पत्नी संबंध पारिवारिक जीवन की आधारशिला होती है। पति-पत्नी का यह रिश्ता सभी प्रकार के अभावों, दुःख-दर्दों में भी मधुरता बनाए रखता है। भारतीय परंपरा में इसे जन्म-जन्म का नाता माना गया है। पति-पत्नी में एकदूसरे के प्रति प्रेम, आस्था और आदर हो तो गृहस्थी सुखपूर्ण निभ सकती है।

आधुनिक काल में पति-पत्नी के बीच प्रेम, विश्वास एवं समर्पण की भावना कम होती जा रही है, वे एक-दूसरे से दूर जा रहे हैं। परिणामतः पति-पत्नी के पवित्र रिश्ते में दरारें पड़ने लगी हैं। अधिकांशतः अविश्वास ही पति-पत्नी संबंधों में दरार पड़ने का प्रमुख कारण रहा है।

नागार्जुन के कवि हृदय में अपनी प्रेयसी पत्नी के लिए बड़े कोमल भाव हैं। उसके साथ बीते क्षणों में कवि खो जाता है। गार्हस्थिक प्रेम का स्वस्थ रूप उनकी कविताओं में पाया जाता है। 'भस्मांकुर' में कामदेव और रति को सफ़ल दांपत्य के रूप में चित्रित कर उन्होंने आधुनिक युगीन दांपत्य जीवन के सामने आदर्श रखा है।

साधारणतः पति-पत्नी संबंध विच्छेद का कारण एकदूसरे के प्रति (अधिकांशतः पत्नी के प्रति) अविश्वास होता है। कवि ने अपने खंडकाव्य 'भूमिजा' में अहल्या और सीता के माध्यम से यही बतलाने का प्रयास किया है।

सामाजिक व्यवस्था में बहुपत्नीत्व स्वीकार्य परंतु नारी के लिए परपुरुष की छाया भी पाप मानी जाती है।

"भूमिजा' के राम और सीता के मध्य दरार पड़ने का कारण अविश्वास ही है। रावण की पराजय के बाद प्रजाहितैषी राम के लिए सीता ने अग्निपरीक्षा द्वारा अपनी पवित्रता प्रमाणित कर दी थी। फिर भी उसे अयोध्या आने पर एक धोबी द्वारा उसके चरित्र पर ऊँगली उठाने के कारण राम वनवास दे देते हैं। यहाँ कवि हमें आधुनिकता बोध कराते हैं कि पति का पत्नी पर पूर्ण विश्वास होना चाहिए। किसी के कहने पर या अफवाहों पर विश्वास रखकर पत्नी के प्रति अविश्वास उत्पन्न नहीं होने देना चाहिए।

नागार्जुन ने 'अहल्या प्रसंग' में भी यही सत्य बतलाने की कोशिश की है। गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या के सौंदर्य पर आसक्त इंद्र एक दिन कपट से उसका सर्वस्व लूटते हैं मगर क्रोधी एवं शक्की गौतम पत्नी को शाप देते हैं। उसे वेश्यासमान कह देते हैं। पति-पत्नी के बीच संशय/अविश्वास का ही यह एक उदाहरण है।

पाषाणी बनी अहल्या का राम अपने पानवस्पर्श से उद्धार करते हैं, तथा उसे विश्वास एवं स्फूर्ति दिलाने के लिए उत्साहित करते हैं -

"नहीं हुई थीं, अम्ब, आप पाषाण
नहीं हुई थीं, अब, आप निष्प्राण

- - - -

अब निश्चित है, पति का अनुचित शाप

- - - -

कैसे छुएँ किसी को कोई शाप
किया नहीं जब सपने में भी पाप?" [81]

कवि ने यहाँ राम के द्वारा आधुनिक युगीन उन पुरुषों की ओर संकेत किया है, जो पतिद्वारा प्रताडित पत्नियों में विश्वास एवं शक्ति पैदा करते हैं।

कवि यहाँ सीता और अहल्या के कथा प्रसंग के माध्यम से आधुनिकता बोध कराते हैं कि वर्तमान युग में कोई भी पति अफवाहों पर विश्वास करके पत्नी को दंडित न करे। बल्कि विश्वासपूर्ण दांपत्य जीवन बिताए। वर्तमान युग में कोई पति पत्नी को अविश्वास के कारण दंडित करें या उसका त्याग करें तो आज की पत्नी अपने आत्मगौरव की रक्षा शोषण से मुक्ति देकर करेगी।

नए युग की आकांक्षिणी

'भूमिजा' के द्वारा नागार्जुन ने नए युग की संकल्पना की है, जो कवि का आधुनिकता भावबोध है।

सीता मुनिवर वाल्मीकि के आश्रम में आश्रयस्नेह पाती है। यहीं पर एकांत में बैठे-बैठे उसे राम की एकपक्षीय मर्यादा तथा न्यायप्रियता के कारण जो सजा मिली उसका विश्लेषण करती है। वह सोचती है कि प्रचलित युग अन्यायी, एकपक्षीय है। वह मिट जाएगा और एक ऐसा परिवर्तित युग आएगा जब आडंबर, प्रवाद और झूठी प्रतिष्ठा को कहीं जगह नहीं मिलेगी। जब सभी सच बोलेंगे, झूठ मोम की तरह गल जाएगा। सभी को न्याय सहज सुलभ मिलेगा। हर कोई स्वतः अनुशासनबद्ध रहेगा। राजा अफवाहों पर ध्यान न देंगे। जनजीवन में ग्लानि होगी ही नहीं।

नए युग में नर-नारी दोनों के लिए मर्यादा, न्याय, विद्या, बुद्धि, विवेक समान होंगे। सही जाँच-पड़ताल के बाद ही किसी को दोषी सिद्ध किया जा सकेगा। घर-घर में सोना-चाँदी, अन्न-वस्त्र आदि पर्याप्त हो, प्रभुता एवं यौवन हो किंतु जन-मन को पहले ज्ञान का दीपक चाहिए। ऐसा युग परिवर्तन कब होगा? यहाँ कवि के आगे प्रश्न चिह्न खड़ा है। कवि जो सोचता है, वह परिवर्तन कब होगा?

"सोच रही हूँ, कब होगा वह कल्प
वह मन्वन्तर, युगारम्भ का दौर
सोच रही हूँ परिवर्तित वह काल
कैसा होगा, क्या होगी युग-रीति
एक-एक जन बोलेगा जब सत्य
जब न प्रवादों पर नृप देंगे ध्यान
झूठ गलेगी जबकि मोम की भाँति
सहज सुलभ होगा जब सबको न्याय

- - - -

नर-नारी में मर्यादा के बोध
सम-सम होंगे सम-सम होगा न्याय
सम-सम होंगे विद्या-बुद्धि-विवेक

- - - -

जन-मन को चाहिए ज्ञान की दीप
सोच रही हूँ, कब होगा वह कल्प" [82]

यहाँ कवि ने सीता के माध्यम से प्रचलित राज्यव्यवस्था पर आलोचना तथा नए युग की नई आदर्शवादी नीति स्पष्ट की है। कवि समकालीन भ्रष्ट राज्यव्यवस्था के प्रति आक्रोश करता है।

एवं नए लोकहितवादी अथवा स्त्रियों के प्रति न्यायपूर्ण व्यवस्था के पक्ष में अपने विचार स्पष्ट करता है।

नागार्जुन के खंडकाव्यों में आधुनिकता बोध के इतर आयाम -

अबलाओं/परित्यक्ताओं के लिए आश्रमव्यवस्था -

प्रजाहितैषी राजा राम एक धोबी द्‌वारा सीता के चरित्र पर ऊँगली उठाने के कारण उसका त्याग कर देते हैं। उसे नवगमन की सजा देते हैं। वह भी गर्भवती अवस्था में। ऐसी स्थिति में सीता वन में वाल्मीकि मुनि के आश्रम में आश्रय पाती है। वहीं पर अपने दोनों बच्चों को जन्म देती है। वाल्मीकि मुनि जैसे तापसियों के मध्य वह अपने बच्चों पर अच्छे संस्कार करती है -

"ये जुडवाँ-नवजात
अनुप्राणित रह गए प्रसव के बाद
करुणा-विगलित तापसियों के मध्य
हुआ भरण-पोषण इनका।" [83]

इस प्रसंग से नागार्जुन वर्तमान युगीन परित्यक्ताओं के लिए आश्रमव्यवस्था की सुविधा की ओर संकेत करते हैं। कई कारणों से परित्यक्ता हुई नारी को अथवा विधवाओं, अबलाओं के लिए आश्रम व्यवस्था की आवश्यक्ता को कवि ने स्पष्ट किया है।

लावारिस नवजात शिशुओं को औरस बनाना -

'भूमिजा' की नायिका सीता राजा जनक की औरस पुत्री नहीं थी। राजा को वह खेत में मिली थी। खेत में हल जोतते समय राजा सीरध्वज जनक को सीता खेत में मिली। राजा ने उसे पुत्रीवत्र मानकर उसका लालन-पालन किया। सीता के इस कथन से उसे पुष्टि मिलती है -

"जनक थे मेरे पालन हार
नहीं थी में औरस संतान" [84]

सीता के माध्यम से कवि अनाथ नवजात शिशुओं की समस्या की ओर संकेत करते हैं। वर्तमान युग में पाश्चात्य अंधानुकरण के परिणाम स्वरूप विवाहपूर्व संबंध तथा अन्य कारणों से उत्पन्न शिशुओं को समाज-भय के कारण फेंका जाता है। जिनके पुनर्वसन का प्रश्न कठिन होता है। ऐसी स्थिति में इन लावारिस शिशुओं को कोई अगर गोद ले तथा औरस बनाए तो इस समस्या का हल काफी हद तक सुलझा जा सकता है। कवि ने समाज के सामने यह आधुनिक विचार रखा है।

मनुष्य जीवन में 'काम' की अनिवार्यता -

नागार्जुन का 'भस्मांकुर' खंडकाव्य 'काम-दहन' के पौराणिक प्रसंग पर आधारित है। इसमें नागार्जुन ने काम के पुनरुद्‌भव को व्यापक संदर्भो में प्रस्तुत किया है। काम का पुनर्जीवन रति के लिए अथवा कुमार की उत्पत्ति के लिए ही नहीं मनुष्यता की परंपरा को, सृष्टिमात्र को जीवित रखने के लिए आवश्यक माना है। काम का अस्तित्व है, तभी तो संसार का, मानव-जीवन का अस्तित्व है।

तपस्या में लीन शिव ने तपस्या-भंग होने के कारण कामदेव को भस्म कर दिया। मतलब काम की जरूरत होने पर भी कामभावना का दमन कर लिया। लेकिन कवि संकेत करते हैं कि दमन करने से मनुष्य

की मनोवृत्ति बिगड़ जाती है। इसलिए काम का भोग लेना चाहिए इससे मनुष्य के मन में कोई कुंठा नहीं रहती एवं व्यक्तित्व का विकास होता है। इस संदर्भ में डॉ. एन. डी. पाटील का कहना है -

"काम एक स्वाभाविक वृत्ति है। उसका दमन मानवजाति के लिए कल्याणकारी नहीं हो सकता। सारी सृष्टि का विकास काम प्रक्रिया पर आधारित है। मानव ही नहीं पशु-पक्षी, जीव-जंतु यहाँ तक कि पेड़-पौधे भी इसी प्रक्रिया से विकसित होते हैं।" [85]

नागार्जुन ने इसी सत्य को आकाशवाणी की योजना करके बताने की कोशिश की है -

"कौन मदन, तुम को कर सकता नष्ट!
जयति जयति भस्मांकुर, जयति अनंग!
जयति जयति रतिनाथ, कामना कंद!
जिजीविषा के उत्स, सृष्टि के मूल!
जयति जयति कन्दर्प, अजय-अमेय!
कौन, मदन, तुमको कर सकता नष्ट!" [86]

यहाँ कवि ने शिव की जयजयकार न करके 'कामदेव' की जयजयकार की है। मनुष्य के मन-प्राणों में चिर-जीवी 'काम' की ही वंदना की गई है। यहाँ कवि ने देवताओं से अधिक मनुष्य को ऊँचा स्थान दिया है।

जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण

नागार्जुन का जीवन के प्रति हमेशा आशावादी दृष्टिकोण रहा है। 'भस्मांकुर' का अर्थ है - ध्वंस के पश्चात अनिवार्यतः उभरनेवाला सृष्टि का रूप। इससे यह इंगित मिलता है कि मृत्यु की तुलना में जीवन की शक्तियाँ अधिक प्रबल होती हैं। डॉ. एन. डी. पाटील कहते हैं, "भस्मांकुर नाम का अपना विशिष्ट अर्थ है, भस्म के अंकुर...। मृत्यु से जीवन। जो समाप्त होता है वह समाप्त नहीं हो जाता है। समाप्ति में से ही नए जीवन का अंकुरण होता है।" [87]

'भस्मांकुर' के माध्यम से कवि ने जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण को अपनाया है।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि नागार्जुन जैसे युगद्रष्टा जनकवि ने पौराणिक कथा के माध्यम से आधुनिक समकालीन समस्याओं को चित्रित कर आधुनिकता बोध की अभिव्यक्ति की है। साथ ही उन्होंने अपने खंडकाव्यों में कुछ मौलिक उद्भावनाओं के द्वारा पौराणिक आख्यान को नया मोड़ दे दिया है।

कुल निष्कर्ष

आधुनिक युग के प्रबंध काव्यों की सबसे बड़ी विशेषता उनकी अंतर्निहित युग-चेतना है। वैसे देखा जाए तो हर युग का कवि अपनी समकालीन परिस्थितियों से प्रभावित होता है। परंतु आधुनिक युग में यह चेतना स्पष्ट उभरकर सामने आई है। प्रबंधकाव्य सामान्यतः पौराणिक संदर्भों को लेकर लिखे जाते हैं। खंडकाव्य भी प्रबंधकाव्य का ही भेद है।

नागार्जुन रचित पौराणिक खंडकाव्य 'भस्मांकुर' और 'भूमिजा' में पौराणिक कथा-प्रसंगों के होते हुए भी नए धरातल पर प्रस्तुत किया है। ऐतिहासिक तथा पौराणिक कथा प्रसंगों, चरित्रों एवं आशयों को ज्यों-का-त्यों ग्रहण कर नागार्जुन ने एक परंपरावादी कवि की भूमिका नहीं निभाई बल्कि

आधुनिक युग के एक सार्थ कवि के नाते उन्होंने खंडकाव्य को नए अर्थों से संपन्न करके प्रस्तुत किया है। कोई भी सचेत कवि परंपरा के सप्राण अंशों को अपने युगानुरूप नया अर्थ देता है, तभी परंपरा सार्थक परंपरा बन जाती है। इसके अभाव में परंपरा शव के समान है और नागार्जुन शव का बोझा ढोनेवाले कवि नहीं थे।

जनकवि नागार्जुन ने लोकहित की भावना से प्रेरित होकर 'भस्मांकुर' और 'भूमिजा' इन खंडकाव्यों का निर्माण किया। इनमें कवि ने पौराणिक पात्रों को मानवी धरातल पर चित्रित किया है। उनके पात्र देवी-देवता न लगकर मनुष्य के समान भासित होते हैं। उन्होंने अपने खंडकाव्यों में युगीन समस्याओं का जैसे, अंधविश्वास, नारी-समस्या, साधुओं का ढोंग तथा मालिक-मजदूर संघर्ष आदि यथार्थ चित्रण किया है। आधुनिक युग में स्वाधीनोत्तर काल में स्थित इन समस्याओं को उन्होंने हमारे सामने रखा है। साथ ही कई मौलिक उद्‌भावनाओं का निर्माण कर आधुनिक धरातल का निर्माण किया है।

नागार्जुन के खंडकाव्य पौराणिक आधार-भूमि के रहते हुए एक प्रगतिशील, समाजचेता आधुनिक कवि की कृति कहलाने का गौरव प्राप्त कर सके हैं। 'भस्मांकुर' में अनेक सामाजिक दोषों की ओर संकेत करते हुए वर्तमान युगीन मनुष्य में 'काम' की अनिवार्यता पर विचार व्यक्त किया है। पार्वती के स्वप्नों की चर्चा उनकी मौलिक उद्‌भावना मानी जा सकती है, जिसमें सामान्य नारी की मनोवैज्ञानिकता देखी जा सकती है। क्योंकि सपने तो मनुष्य देखता है और सपनों को पूरा करने के लिए प्रयत्नरत रहता है। देवताओं को सपने देखने की जरूरत ही कहाँ है? देवता तो जो मन में आए, वो हासिल कर सकते हैं। इस प्रसंगसे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि नागार्जुन के खंडकाव्यों के पात्र पौराणिक व्यक्तित्व के बावजूद मानवी लगते हैं।

'भूमिजा' में सीता द्‌वारा नए युग की संकल्पना कवि की आधुनिक बोधपरक महसूस होती है। युग परिवर्तन की संकल्पना वर्तमान युगीन भावबोध कराती है। सीता का धरती में समा जाना समकालीन शोषणप्रिय राजनीति से मुक्ति का चरमोत्कर्ष है। बदलते हुए वर्तमान परिवेश में नागार्जुन बताते हैं कि यदि कोई शासक या पति-पत्नी के चरित्र पर बिना सोचे समझे विचार करें या उसका शोषण करें तो आज की नारी शोषण से मुक्त होकर अपने स्वाभिमान की रक्षा करेगी।

नागार्जुन स्त्री-स्वातंत्र्य के पक्षपाती रहे हैं। उन्होंने अपने खंडकाव्यों में आधुनिक नारी की अपने अस्तित्व के प्रति जागरूकता को दिखाकर आधुनिक बोध कराया है।

कवि ने अनमेल विवाह, अंधविश्वास, आडंबर, पूँजीवादियों एवं मालिकशाही का वर्चस्व, राजनीतिक अव्यवस्था, विभिन्न सामाजिक समस्याओं को अपने खंडकाव्यों में चित्रित कर वर्तमान युगीन बोध को अभिव्यक्ति दी है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आधुनिक कवि नागार्जुन ने पुरानी कथावस्तु के माध्यम से आधुनिक खंडकाव्यों की निर्मिति की। काव्य का विषय तो पौराणिक मगर मूल समस्याएँ समकालीन दिखाकर खंडकाव्यों में आधुनिकता बोध कराया है।

❖ ❖ ❖

संदर्भ ग्रंथ सूची

1.	नई कविता - सीमाएँ और संभावनाएँ - डॉ गिरिजाकुमार माथुर	105
2.	नव्य प्रबंध काव्यों में आधुनिक बोध - डॉ. उर्वशी शर्मा	46
3.	आधुनिकता के बारे में तीन अध्याय - धनंजय वर्मा	14/15
4.	आधुनिक खंडकाव्यों में युगचेतना - डॉ. एन. डी. पाटील	27
5.	आधुनिकता और समकालीन रचनासंदर्भ - डॉ. नरेन्द्र मोहन	11
6.	वातायन - जनवरी 1967 (प्रभाकर माचवे का लेख - आधुनिकता, सामयिकता और हिंदी कविता)	42
7.	आधुनिकता बोध और आधुनिकीकरण - रमेश कुंतल मेघ,	11/12
8.	आज का हिंदी साहित्य - डॉ रामदरश मिश्र	18
9.	आधुनिकता और हिंदि साहित्या - डॉ. इंद्रनाथ मदान	70
10.	नई कविता के प्रबंध काव्य शिल्प और जीवन दर्शन - डॉ. उमाकांत गुप्त	289
11.	दूसरा सप्तक (भूमिका) - अज्ञेय	67
12.	नव्य प्रबंध काव्यों में आधुनिक बोध - डॉ. उर्वशी शर्मा	50
13.	वही,	52
14.	वही,	66
15.	वही,	56
16.	वही,	58
17.	तारसप्तक (अज्ञेय द्वारा संपादित) - अज्ञेय	10/11
18.	नई कविता के प्रतिमान - लक्ष्मीकांत वर्मा	24/25
19.	वही,	25
20.	हिंदी में आधुनिकतावाद - दुर्गाप्रसाद गुप्ता	38
21.	छठवा दशक -विजयदेव नारायण साही	198
22.	चक्रव्यूह - कुँवरनारायण,	133/134
23.	वही,	36
24.	चिदंबरा - सुमित्रानंदन पंत,	83
25.	वही,	65
26.	ग्राम्या - सुमित्रानंदन पंत,	79
27.	चक्रव्यूह - कुँवरनारायण	39
28.	पहाड पर लालचेन - मंगलेश डबराल	33
29.	संशय की एक रात - नरेश मेहता	51
30.	सतरंगे पंखोंवाली - नागार्जुन	44

31.	प्यासी पथराई आँखें - नागार्जुन	29
32.	हंस - जून 1949, अंका	640
33.	हजार-हजार बाहोंवाली - नागार्जुन	54
34.	वही,	49
35.	वही,	19
36.	सतरंगे पंखोंवाली - नागार्जुन	21
37.	नागार्जुन जीवन और साहित्य - डॉ. प्रकाशचंद्र भट्ट	51
38.	वही,	52
39.	वही,	59
40.	अब तो बंद करो देवि, यह चुनाव का प्रहसन - नागार्जुन	6
41.	वही,	7
42.	सतरंगे पंखोंवाली - नागार्जुन	12
43.	वही,	12
44.	वही,	13
45.	नागार्जुन : जीवन और साहित्य - डॉ. प्रकाशचंद्र भट्ट	54
46.	सतरंगे पंखोंवाली - नागार्जुन	29
47.	युगधारा - नागार्जुन	3
48.	प्यासी पथराई आँखें - नागार्जुन	28
49.	जनयुग - सितंबर 1970 अथवा नागार्जुन : जीवन और साहित्य	57
50.	भूमिजा - नागार्जुन	16
51.	वही,	45
52.	वही,	51
53.	भस्मांकुर - नागार्जुन	46
54.	वही,	50
55.	भूमिजा	18
56.	हजार-हजार बाहोंवाली - नागार्जुन	142
57.	भस्मांकुर	147
58.	वही,	47
59.	भूमिजा - नागार्जुन	30
60.	नागार्जुन : जीवन और साहित्य - प्रकाशचंद्र भट्ट	48
61.	भस्मांकुर - नागार्जुन	54/55
62.	वही,	51

63. वही, 52

64. भस्मांकुर - नागार्जुन 7

65. वही, 55

66. वही, 71/72

67. वही, 78

68. भस्मांकुर - नागार्जुन 78

69. भूमिजा - नागार्जुन 37

70. भूमिजा - नागार्जुन 61

71. भस्मांकुर - नागार्जुन 72

72. भस्मांकुर - नागार्जुन 60

73. वही, 72

74. वही, 65

75. भूमिजा - नागार्जुन 74

76. भूमिजा - नागार्जुन 58/59

77. वही, 58/59

78. भस्मांकुर - नागार्जुन 54

79. वही, 54

80. वही, 44

81. भूमिजा - नागार्जुन 56

82. वही, 68/69

83. वही, 70

84. वही, 62

85. आधुनिक खंडकाव्यों में युगचेतना - डॉ. एन. डी. पाटील. 152

86. भस्मांकुर - नागार्जुन 78

87. आधुनिक खंडकाव्यों में युगचेतना - डॉ. एन.डी. पाटील. 340

❖ ❖ ❖